प्रथम संस्करण
सितम्बर, १९६१

प्रकाशक
राजपाल एण्ड सन्ज़
[illegible] दिल्ली

●

मूल्य
चार रुपये

कार्यालय व प्रेस
जी टी रोड शाहदरा दिल्ली १२

●

[illegible]
कश्मीरी गेट दिल्ली ६

हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस दिल्ली में मुद्रित

मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद्

प्रशस्ति-पत्र

श्री आनन्द मिश्र

को

सन् १९६६ ई० के लिए पुरस्कारार्थ घोषित

"सर्वोत्कृष्ट पद्य"

विषय के अन्तर्गत

"हिमालय के आँसू"

पद पर उनकी साहित्य-सेवा की सराहना करते हुए

मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद्

२१०० रु० (दो हजार एक सौ रुपये)

का

"देव-पुरस्कार"

सम्मानपूर्वक प्रदान करती है।

बा० ना० पण्डित — सचिव

[illegible] — अध्यक्ष

[illegible] दि० [illegible] १९६[illegible]

महाप्राण निराला की सेवा में
यह अकिंचन कृति
सादर

निवेदन

"कविता की अपनी राह जुही और चमेली के कुंज से होकर नहीं प्रत्युत समर्थ बुद्धि की कड़ी चट्टान पर से होकर जानेवाली है।"

प्रस्तुत काव्य-संग्रह 'हिमालय के आँसू' के प्रारम्भिक निवेदन के रूप में कुछ कहने से पूर्व सहसा मुझे 'चक्रवाल' की भूमिका से कविवर दिनकरजी का उपर्युक्त वाक्य स्मरण हो आया है। मैंने दिनकरजी के इस मत को हिन्दी की नई कवि-पीढ़ी के प्रति दिशा-संकेत की तरह स्वीकार किया है। यह ध्वनि मेरे अंतर्मन तक पहुँची है और मैं जुही-चमेली के कुंज तथा समर्थ बुद्धि की कड़ी चट्टान के बीच सामंजस्य का दर्शन करना चाहते हुए भी दिनकरजी के इस मत से वास्तविक प्रभावित हुआ हूँ। हाँ, मैं अपनी बात कुछ इस तरह कहना चाहूँगा कि हमारी आगामी कविता तभी समर्थ एवं सार्थक बन पा सकेगी जब जुही चमेली का कुंज कड़ी चट्टान पर लहलहाएगा, जब मधुर धरती की छाती चीर कर निकलेंगे और उनके पौधों की डालियों पर रूप, रस और गन्धवाले फूल मुस्कराएँगे।

'साधना' के नाम से मेरा प्रथम काव्य-संग्रह १९५२ में प्रकाशित हुआ था। १९४[illegible] से लिखना आरम्भ किया। फिर १९५७ में 'चन्देरी का जौहर' तथा 'झाँसी की रानी' मेरे दो प्रबन्ध प्रकाशित हुए। और अब 'हिमालय के आँसू' के नाम से मेरी ६१ कविताओं का यह संकलन प्रकाशित होने जा रहा है। 'हिमालय के आँसू' को हाल ही में मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद् द्वारा देव-पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया गया है।

नहीं जानता कि मैं अच्छी कविता लिख भी पाता हूँ या नहीं। इसके निर्णय का अधिकार भी लेखक का नहीं होता। मेरे सन्तोष का आधार-मात्र इतना ही है कि मैंने अब तक जो कुछ भी लिखा है उसका अधिकांश [illegible] जागकर लिखा है, ईमानदारी से लिखा है, सोद्देश्य लिखा है। यह ठीक है कि मैं अपनी इन ग्यारह वर्षों की साहित्यिक यात्रा के विषय में बहुत कुछ कहना चाहता हूँ पर यह फिर कभी की बात है। आज मेरा मौन रह जाना अधिक श्रेयस्कर है।

राजपाल एण्ड सन्ज़ के व्यवस्थापक श्री विश्वनाथ जी मल्होत्रा का कृतज्ञ हूँ जिनके सहयोग से यह कृति इतने कम समय में पाठकों की सेवा तक आ रही है।

सुझावों के लिए सदा आभारी—

ग्वालियर — भवदीय

१ जुलाई १९६१ — आनन्द मिश्र



अनुक्रम





अनुक्रम



क्यों लिखता हूँ ?

तुमने पूछा यह प्रश्न कि मैं क्यों लिखता हूँ ?
क्यों चौराहों पर भीड़ जोड़कर गाता हूँ ?
क्यों कभी सितारों से बातें करता हूँ मैं
क्यों कभी धरा की धूल स्वर्ण बतलाता हूँ ?

रंगीन स्वप्न यह नहीं सचाई है साथी !
जो कुछ कहता हूँ वह मेरा अपनापन है,
सुन्दर है सुन्दर, किंतु उपेक्षित जो कुरूप
उसको सुन्दरतम बतलाता मेरा मन है।

तुम कह दोगे यह झूठ कहो सुन सकता हूँ
लेकिन मन की कहता हूँ आदत है मेरी
तुम बहते हो नैया में मैं मझधारा में
दोनों जाएँगे पार, मुझे होगी देरी !

लेकिन क्या करूँ मुझे यह राह अधिक भाई,
सीधा पथ छोड़ चला हूँ मैं उलझे पथ पर,
अपना अपना मन है मैं पैदल चलता हूँ
तुमको जाना है आओ सोने के रथ पर !

कब कहता हूँ मुझको भी साथ बिठा लो तुम
है ज्ञात मुझे वेदम चलने लग जाओगे
इसलिए कि बिन काँटों के मधुवन सूना है
तुम भी पाँवों के छाले गले लगाओगे।

मैंने तारों पर गीत लिखे उनमें मुझको
अपने अन्तर की जलन दिखाई देती है
फूलों की भरी जवानी का गाया मैंने
इनमें मेरी साधें अँगड़ाई लेती हैं।

बिजलियाँ मुझे उत्साह दिया करतीं पथ में
कोयल की कूक नई सिहरन भर देती है।
मेघाबलिया भावों में पर लगा देती
पावस की झड़ियाँ हृदय हरा कर देती हैं।

क्या उत्तर दूँ सूरज दिन भर क्या जलता है?
क्या मिला उसे जग आलोकित कर जाने में?
क्या मिलता है दीपक को अपनी देह जला—
हारे, पंथी को निशि भर राह दिखाने में?

इसका इतना उत्तर केवल हो सकता है
अपनी आदत है यम अपना अपना मम है
जा सके नहीं सदा कुछ दसे आए हैं
उनके बल पर ही तो गिनता यह मधुवन है।

मैं सबसे करता प्यार मगर उनसे ज्यादा
जो यहाँ मौत का नियम बदलने जीते हैं

मुरझाते हैं, लेकिन मुरझाकर जीवित हैं
जो बासी नहीं हमेशा ताजी पीते हैं।

ऐसे जीनेवालों पर मुझे तरस आता
जो मुश्किल को ही मौत समझ मर जाते हैं
कठिनाई तो मंजिल की पहली सीढ़ी है
लगता है बुरा कि क्यों गलती कर जाते हैं।

जब मेरा विद्रोही मन मथने लगता है,
गीतों की धार फूटकर बहने लगती है
इन्सान इस तरह जियो कि मौत चरण चूमे
जागो तन्द्रा से वाणी कहने लगती है।

भावना नहीं है यह केवल मेरे मन की
कर्तव्यपरायणता कहती है गाता चल
हाँ ठेकेदारी है तेरी दुनिया भर का
भयभीत न हो बच्चों को गले लगाता चल।

संसार कहाँ करता परवाह किसी की भी
जो छोड़ सके पद-चिह्न वही तो जीवित है
जो बुझे मनों पर दीप जला जाए अनगिन
वह बुझता नहीं कभी वह तो चिरदीपित है।

जो जीवन में विश्वास प्रीति दृढ़ लिए हुए,
जो अन्धकार को नित चीर रहा है सविता
बस यही सत्य मैंने पहचाना है अब तक
जिसका अनुवाद किया करती मेरी कविता।

मैं तुमसे पूछ रहा हूँ बतला सकते हो
मोती लाए हो या कि सतह पर तिरते हो?
देखा है कभी डूबकर इस गहराई को
या केवल लहरें देख-देखकर डरते हो?

मैं डूबा हूँ लाया हूँ मोती पिरो रहा
तुम देख रहे यह उनकी ही तो माला है
यह सच है इसमें नहीं सुरा की मादकता
पर कुन्दन तुम्हें बना दे ऐसी ज्वाला है।

तुम चलना चाहोगे अब मुझसे कतराकर
इसलिए कि पाप दीप पर धोखा करता है
इसलिए कि तुम पीते हो केवल सुरा-सुरा
मेरा कवि उसमें साथ धोखा करता है।

जो पीकर जहर अमर होना चाह आएँ
जो बेहोशी चाहें वे मुझसे दूर रहें
जो जूझ सकें मझधारों में वे साथ चलें
जो भूल-भूल चाहें वे अपनी राह गहें।

मेरे गीत

हारे जीवन की शक्ति गीत हैं मेरे।

हर शब्द एक आँसू युग के लोचन का
हर भाव एक उच्छ्वास प्रज्वलित मन का
प्राणों की सीपी में ढलकर निकले हैं
युग-पीड़ा की अभिव्यक्ति गीत हैं मेरे।
हारे जीवन की शक्ति गीत हैं मेरे।

जग की आकृति के ये निर्मल दर्पण हैं
वर्षों को साधे हैं, माना लघु कण हैं
इनकी लघुता पर मैं महिमा को वारूँ
कण पर असीम आसक्ति गीत हैं मेरे।
हारे जीवन की शक्ति गीत हैं मेरे।

इनमें सावन की मंजुल हरियाली है
शशि की शीतलता ऊषा की लाली है
इनमें वह सब है जो वरेण्य संसृति का
मन की निश्छल अनुरक्ति गीत हैं मेरे।
हारे जीवन की शक्ति गीत हैं मेरे।

बाली है इतनी इन गीतों में प्यासा
हर गीत अमरता के आसव का प्याला
जीवन के तप के ये प्रतीक हैं पावन
बंधन से परम विरक्ति गीत हैं मेरे।
हारे जीवन की शक्ति गीत हैं मेरे।

क्या नहीं है ?

पूछते हो तुम कि मेरे पास क्या है ?
क्या नहीं है ?

बादलों का दर्द बिजली की तड़प आँसू घटा के
रात की स्याही सितारों की जलन सिसकी पवन की।
आह फूलों की कि जिनका तन बिंधा है कण्टकों से
उस पपीहे की व्यथा करुणा यहाँ सारे भुवन की।
वेदना से कीमती हीरे नहीं मोती नहीं हैं।
पूछते हो तुम कि मेरे पास क्या है ?
क्या नहीं है ?

कौन हैं वे पुतलियाँ जिनको नहीं पानी मिला है
प्राण है कोई यहाँ जो पीर का पाला नहीं हो ?
साँस है कोई कि जो उच्छ्वास की दासी नहीं हो
पैर है कोई कि जिसके वक्ष पर छाला नहीं हो ?
आँख वह क्या नहीं जो फूटकर रोती नहीं है।
पूछते हो तुम कि मेरे पास क्या है ?
क्या नहीं है ?

विश्व भर का दर्द आँसू सिसकियाँ उच्छ्वास छाले
जिस जगह आकर मिले हैं सब वहीं कवि का हृदय है।

एक सीमित बिन्दु से लेकर असीमित सागरों तक
जिस जगह लेन-तुल है सब वही कवि का हृदय है।
दीन है वह मन जहाँ सम्पन्नता होती नहीं है।
पूछते हो तुम कि मेरे पास क्या है?
क्या नहीं है?

समझौता नहीं किया

तरी डूब जाएगी इसकी कभी मुझे परवाह नहीं थी
मैंने किसी मानवाले तट से समझौता नहीं किया।

कितनी बार नाव को तुमने धारा के हाथों बेचा है
कितनी बार बिना पूछे कर दी भँवरों के साथ सगाई।
कितनी बार पगों को तुमने लहरों की बेड़ी पहनाई
पर कुछ ऐसा हुआ नाव हर बार कूल से आ टकराई।
मुझ-सा खेवा नहीं मिलेगा तुम्हें कि जिसने सपनों का—
विष पी लिया कभी मधु के घट से समझौता नहीं किया।
तरी डूब जाएगी इसकी कभी मुझे परवाह नहीं थी
मैंने किसी मानवाले तट से समझौता नहीं किया।

तृप्ति छीनकर डाली तुमने प्राणों पर निस्सीम पिपासा
ज्ञान क्या हो गया कि मुझको यही प्यास वरदान हो गई।
जितनी पतझर मुझे दी तुमने पूनम बनकर खिली डगर में
जितने काँटे दिए कि उतनी और राह आसान हो गई।
सिर पर धूप भरी दुपहर को जीवन भर पग-तल अंगारे,
मेरी सहनशीलता ने घट से समझौता नहीं किया।
तरी डूब जाएगी इसकी कभी मुझे परवाह नहीं थी
मैंने किसी मानवाले तट से समझौता नहीं किया।

अब तो कुछ इतना आदी हूँ दर्द नहीं तो जीना क्या है।
जितने मधु तुम्हारे घर हों दे आओ मैं फूल बनाऊँ।
जितनी पीड़ा पास तुम्हारे मुझसे बदलो मुसकानों में
जहर मुझे मिल जाए जितना जीवन के अनुकूल बनाऊँ।
जीते-मरते मरते-जीते खेल हुआ मरना-जीना
मेरी तरुणाई ने मरघट से समझौता नहीं किया।
तरी डूब जाएगी इसकी कभी मुझे परवाह नहीं थी
मैंने किसी मानवाले तट से समझौता नहीं किया।

गोताखोर

मैं गोताखोर, मुझे गहरे जाना होगा
तुम तट पर बैठ भँवर की बातें किया करो।

मैं पहला खोजी नहीं अगम भव-सागर का
मुझसे पहले इसको कितनों ने थाहा है
इस के मोती खोजे परखे बिखराए हैं,
डूबे हैं पर मिट्टी का कौल निबाहा है,
मैं भी खोजा हूँ मुझमें-उनमें भेद यही
मैं सबसे महँगे उस मोती का प्रार्थी हूँ—
जो मिला नहीं वह पा लेने की धुन मेरी
तुम मिला सहेजो घर की बातें किया करो।
मैं गोताखोर, मुझे गहरे जाना होगा
तुम तट पर बैठ भँवर की बातें किया करो।

पथ पर तो सब चलते हैं चलना पड़ता है
पर मेरे चरण नया पथ चलना सीखे हैं
तुम हँसो मगर मेरा विश्वास न हारेगा
जीने के अपने-अपने अलग तरीके हैं,
जिस पथ पर कोई पद निशानी छोड़ गया
उस पथ पर चलना मेरे मन को रुचा नहीं
काँटे रौंदूँगा अपनी राह बनाऊँगा

तुम फूलों भरी डगर की बातें किया करो।
कोई बोझा अपने सिर पर मत लिया करो।
मैं गोताखोर मुझे गहरे जाना होगा
तुम तट पर बैठ भँवर की बातें किया करो।

नयनों के तीखे तीर मुस्कानों की छाया
मन बाँध रही यह जो रंगों की डोरी है
इन गीली गलियों में भरमाया कौन नहीं
यह भूल आदमी की सचमुच कमजोरी है
लेकिन अपने पर विजय नहीं जिसने पाई
मैं उसको कायर कहता हूँ पशु कहता हूँ
मैं इसीलिए बस वीराने में रहता हूँ
तुम जादू भरे नगर की बातें किया करो।
जब जब हो ज़रा उदास, और पी लिया करो।
मैं गोताखोर मुझे गहरे जाना होगा
तुम तट पर बैठ भँवर की बातें किया करो।

पथ पर चलते उस रोज बहार मिली मुझसे
बोली 'गायक! मैं तुमसे ब्याह रचाऊँगी
ऐसा मनमौजी मिला नहीं दूसरा मुझे
जग भर के फूल तुम्हारे घर ले आऊँगी'
मैं बोला मेरा प्यार, सदा तुम सुखी रहो
मेरे मन को कोई बंधन स्वीकार नहीं"
तब से बहार से मेरा नाता टूट गया
फूलों को अपनी झोली में रख लिया करो।
मुझसे बयस पतझर की बातें किया करो।
मैं गोताखोर मुझे गहरे जाना होगा
तुम तट पर बैठ भँवर की बातें किया करो।

गीत बागी हो गए हैं

सिंधु से कह दो कि मथन के लिए तैयार हो ले
आज मेरे गीत बागी हो गए हैं।

इस तरह कब तक सहेजेगा तली म
कोष अमृत का जगत् पाकर रहेगा
यह धरोहर जोकि तू बैठा दबाए,
एक दीवाना इसे लाकर रहेगा
य भँवर, सार्टे लहरियाँ व्यथ हैं सब
आज मैं सिर पर कफन बाँधे चला हूँ
फूल से कह दो कि वन्न के लिए तयार हो ले
आज मेरे गीत बागी हो गए हैं।
सिंधु से कह दो कि मंथन के लिए तैयार हो ले
आज मेरे गीत बागी हो गए हैं।

वे निराशा की घटाएँ छट चुकी हैं
मैं नया विश्वास लेकर आ रहा हूँ
फूल-कलियों पर जवानी आ गई है
गीत जीवन की विजय के गा रहा हूँ
स्वग स भव यह धरित्री होड लेगी
इन दिमागों से कहो मेरी बजाएँ,

व्योम से कह दो कि पूजन के लिए तयार हो ले
आज मेरे गीत बागी हो गए हैं।
सिंधु से कह दो कि मंथन के लिए तयार हो ले
आज मेरे गीत बागी हो गए हैं।

कौन यह पतझर कि जो ललकारता है
आज मिट्टी के मचलने की घड़ी है
देख मैं हरियालियाँ बरसा रहा हूँ
ध्वंस! तुमसे उम्र सृजन की बड़ी है
प्यास प्राणों की न सोखी जा सकेगी
मर्त्य हूँ मरकर अधिक जीवित रहूँगा
काल से कह दो समर्पण के लिए तैयार हो ले
आज मेरे गीत बागी हो गए हैं।
सिंधु से कह दो कि मंथन के लिए तैयार हो ले
आज मेरे गीत बागी हो गए हैं।

थपेड़े

खा चुका जिंदगी के थपेड़े बहुत
धार ही बन गई अब किनारा मुझे।

चल पड़ी थी न जाने कहाँ से तरी
लक्ष्य अज्ञात था राह अनजान थी
शीश पर थी गगन की गहन नीलिमा
सामने वारि-धारा प्रवहमान थी
और भी तरणियाँ साथ बहती दिखीं
किंतु सबकी तरी पर तने पाल थे
नाव मेरी बिना पाल-पतवार की—
डोलती थी उभरते लहर-जाल पे
डाँड़ दो-चार ही ले सका था अभी
मूसलाधार पानी प्रभंजन चले
हाथ साहस लगे तोलने प्राण का
आँधियों ने बहुत ही दुलारा मुझे।
खा चुका जिंदगी के थपेड़े बहुत
धार ही बन गई अब किनारा मुझे।

उलझनों से भरी चल रही लघु तरी
थी घनी भाद्रपद की अँधेरी निशा

ग्रौर चिता किसे थी सुझाता मुझे
मैं चुनूं कौन-सी एक ग्रोफल दिसा
हाँ कुतूहल भरा प्राण ग्राता स्वयं
रात के ग्रार क्या है इसे जान ले
बँध गई धुन चरण खोज लेने किरण
चल पड़े प्राण का सिर्फ ग्रनुमान ले
प्रात ग्राया चला रात ग्राई गई,
पाँव चलते रहे अग बदलता रहा
ग्रन्त है रात लेकिन दिखाता रहा
टूटकर व्योम का हर सितारा मुझे।
ला घुमा जिंदगी के थपेड़े बहुत
धार ही बन गई ग्रब किनारा मुझे।

ग्रौर ग्रब जान पाया कि इस विश्व में
धार है सत्य माया सभी कूल हैं
क्या ग्रजब बात है वाह री जिंदगी!
फूल भी धूल है धूल भी फूल हैं
सुख नहीं है ग्रनश्वर यहाँ पीर है
इसलिए पीर से ग्रब मुझे प्यार है
सुख उन्हें जो कि जीना नहीं जानते
जानते जो गरल भी उन्हें धार है
धारणा बन गई है हृदय की ग्रटल
जिंदगी दूसरा नाम संघर्ष का
यातनाएँ नहीं भय रही ग्रब तनिक
फूल-सा राह का हर ग्रँगारा मुझे।
ला घुमा जिन्दगी के थपेड़े बहुत
धार ही बन गई ग्रब किनारा मुझे।

सागर का विस्तार चाहिए

मेरी भावुकता को सीमाओं बाँध नहीं पाओगे
पोखर का तराक नहीं मैं सागर का विस्तार चाहिए।

तुम तम की महमानी करते तम के आदी बन बैठे हो
जीवन की अविजेय चेतना के प्रतिवादी बन बठे हो।
घूम झूमते आँखें किरणों से कतराना सीख गई हैं
अधकार के हाथ बिके अपनी बरबादी बन बैठे हो।
मिली मुझे भी अमा मगर मैंने सूरज के सपन देखे
तुम्हें मुबारक रात तुम्हारी मुझे ज्योति का ज्वार चाहिए।
मेरी भावुकता को सीमाओं में बाँध नहीं पाओगे
पोखर का तराक नहीं मैं सागर का विस्तार चाहिए।

तुम पतझर के दास कभी जागे तो अपना फूल खिलाया
कभी रागनी मिली मगर तो अपने घर में दीप जलाया।
चाहा तो चाहा कि घटाएँ सिर्फ तुम्हारे द्वारे बरसें
एक तुम्हारा आँगन-आँगन तुमने सावन को समझाया।
मैंने जीवन भर मुसकाकर कोई गेती आँख न देखी
हँस गिरसूँ मुझे तो सारी बगिया का श्रृंगार चाहिए।
मेरी भावुकता को सीमाओं म बाँध नहीं पाओगे
पागर का तरार नहीं मैं सागर का विस्तार चाहिए।

वह तिनका मैं नहीं, कि आँधी सिर पर बैठ नाचे-गाए,
मेरे साहस की दृढ़ता पर विपदाओं में दीप झुकाए।
मैं अपना पथ चुना कि मेरी अपनी जीवन की परिभाषा
चुगे अमर तो मोती हंसा चाहे लंघन कर मर जाए।
तुम जो परिधि खींचकर बैठे अपनी गली सींचकर बैठे
मैं क्या करूँ कि मेरी साधों को असीम संसार चाहिए।
मेरी भावुकता को सीमाओं में बाँध नहीं पाओगे
पोखर का तरंग नहीं मैं सागर का विस्तार चाहिए।

मिट्टी का कर्ज़

डूबो नयनों में अलका में उसकी चितवन के तीर सहो
पर इस मिट्टी को मत भूलो इसका भी कर्ज चुकाना है।

मैंने कब कहा कि तुम कलियों की शोख नजर से दूर रहो
मैंने कब कहा कि तुम पूनम की रातों से मत प्यार करो
मैंने कब कहा रूप की जादू-नगरी में घूमा न करो
मैंने कब कहा कि मदिरा की बरसातों से मत प्यार करो
मैं तो बस इतना कहता हूं भाई! फूलों म खूब खिलो
भौंरों के हास छीन न दें काँटे भी दूर हटाना है।
इसका भी कर्ज चुकाना है।

यह बात सत्य है मुझे छाँह भी जीवन की सच्चाई है,
लड़ते-भिड़ते हम कभी किनारे तक आ जाया करते हैं
आपाधापी-खींचातानी म जो गाँठें पड़ जाती हैं
हम उन्हें प्यार के कोमल हाथों से सुलझाया करते हैं
मैंने कब कहा चाँद की बाहों म तुम थकन मिटाओ मत
बस याद रहे इस सूरज के शोलों म भी मुसकाना है।
इसका भी कर्ज चुकाना है।

मिट्टी वह साहूकार कि जिसका कर्ज पचाना मुश्किल है
आया न एक ऐसा जिसने इसका धन लेकर दिया नहीं
आया न एक ऐसा जिसने रो-रोकर हँसकर विष पिया नहीं
जो मूल नहीं लौटाते हैं वे ब्याज मिलाकर देते हैं
मैं तो बस इतना कहता हूँ अरमानों का बोझ बढ़ाना है।
डूबो सपनों में कसमों में उलझो चितवन के तीर सहो
पर, इस मिट्टी का मत भूलो इसका भी कर्ज चुकाना है।

गीत

आज उर अंगार से शृंगार करना चाहता है।

अब उठाकर शीश जीना चाहती मेरी जवानी
अब न सोने की बनी दासी रहेगी पूत वाणी
अब नहीं अपमान सहना चाहता पावन पसीना
अब नहीं बेबस बहेगा आँख का अनमोल पानी
थक चुका धीरज तुम्हारे न्याय की आशा अधूरी
आज हर अन्याय का प्रतिकार करना चाहता है।
आज उर अंगार से शृंगार करना चाहता है।

प्राण के अरमान ज्वाला बन पिघलना चाहते हैं
अश्रु बनकर धार लावा की निकलना चाहते हैं
आज नस-नस काँप उठना चाहती हैं बिजलियाँ बन
जिंदगी की गीत परिभाषा बदलना चाहते हैं
अब अँधेरे की गुलामी से किरण उकता चुकी है
रवि उजाला आज कारागार करना चाहता है।
आज उर अंगार से शृंगार करना चाहता है।

आज बेड़ा मुक्त है आओ प्रलय ! तूफान आओ।
आँधियो आओ अमावस ! नाश के सामान आओ।

ओ महसम ! लो कि मेरी क्षुद्रता भी आजमाओ
मैं न मरकर भी मिटा हूँ काल के अभिमान आओ
घन चले चाहे न मेरा वश लेकिन अब चलेगा
आज हर आभास यह स्वीकार करना चाहता है।
आज उर अंगार से शृंगार करना चाहता है।

गाते जाओ

तुम चहको तभी सवेरा है,
मन के पंछी ! गाते जाओ।

माना अनजान बिजलियों ने
हर बार नीड़ बिखराया है
आँधी ने तृण छितराए हैं
अँधियारा ने धमकाया है
लेकिन हर बार धीर, तुमने
तिनके चुन उसे सजाया है
जर्जर पत्तों से भी तेरा—
निश्चय नभ छूकर आया है,
यह बात नई तो नहीं आज
तूफान गरजते आते हैं
थकना जीवित मर जाना है,
मन के पंछी ! गाते जाओ।
तुम चहको तभी सवेरा है
मन के पंछी ! गाते जाओ।

मंजिल मत पूछो कूल कहाँ !
जीवन तो अविरत चलना है

गिरना है गिरकर उठना है,
उठना है और सँभलना है
आँधी हो या अँधियारा हो
जलना है हरदम जलना है
शूलों में रग रग बिधी रहे
फिर भी हँस-हँसकर खिलना है
जय का न प्रलोभन रिझा सके
भय हो न पराजय का मन को
सानो ये झंझे और धारा
मन के पंछी ! गाते जाओ।
तुम चहको तभी सवेरा है
मन के पंछी ! गाते जाओ।

साधक से

तुमने ही वरदान चुन लिया
युग का शाप कौन झेलेगा?

डाम रहे यह आ प्यालों में
फेन उगलती मादक हाला
गलबाहें वरमाला जैसी
फिरकी-सी चंचल मधुबाला
रूप प्यार के झरते निर्झर
मदहोशी में डूब डूबे
तुमने ही मधुपान चुन लिया
विष का शाप कौन झेलेगा?
युग का शाप कौन झेलेगा?

देखो तो कितनी उजड़ी है
जीवन की फूलों फुलवारी
डाल डाल सूखी मुरझाई
मरघट-सी यह क्यारी-क्यारी
धूम-धूम कितना घायल है
यो जीवन मधुवन के मानी!

तुमने युग सधान चुन लिया
यह परिताप कौन झेलेगा ?
युग का शाप कौन झेलेगा ?

आओ इन रीते प्राणों में
फिर साधों के फूल खिलाएँ,
आओ इन सूनी आँखों में
फिर सपनों के साज सजाएँ,
जिस नभ का सूरज संन्यासी
उसकी रात ढलेगी कैसे ?
तुम तोड़ोगे जग की तन्द्रा
अपने आप कौन झेलेगा ?
युग का शाप कौन झेलेगा ?

गीत

जिसने भी माँगा जीवन से वरदान बहारों का माँगा
मेरी दीवानी साधों ने जी भर पतझर से प्यार किया।

जो भी रीझा अब तक रीझा मधु पर मदिरा की लाली पर
रीझा भौंरों के गुंजन पर रीझा पराग की प्याली पर,
जिसने भी माँगा सावन से वरदान फुहारों का माँगा
मेरे गीतों ने विद्युत की अंगार-लहर से प्यार किया।
मेरी दीवानी साधों ने जी भर पतझर से प्यार किया।

जिसने चाही अब तक चाही नभचुंबी महलों की छाया
हीरा-मोती चाँदी-सोना वैभव की क्षणभंगुर माया
जिसने भी माँगा निर्जन से वरदान सितारों का माँगा
मेरी मानी अभिलाषा ने अपने खँडहर से प्यार किया।
मेरी दीवानी साधों ने जी भर पतझर से प्यार किया।

दो क्षण का सुख मेरा असीम दारुण प्रवाह सह ना न सका
मृग की प्रवंचना के स्वर में मेरा पीड़ित मन गा न सका
चलनेवालों ने मधुवन से वरदान सहारों का माँगा
मेरे पंथी ने जीवन भर कंटकित डगर से प्यार किया।
मेरी दीवानी साधों ने अब तक पतझर से प्यार किया।

सबने जीवन के सागर म नैया पाट़ी सबस चाहे
धारा म घुटने टेक दिए पतवारों के मौसम चाहे
जिसने भी माँगा उमभन म बरसात किनारों का माँगा
मेरी तैराक भुजाओं ने बस एक भँवर से प्यार किया।
मेरी दीवानी साँसों ने जी भर पतझर से प्यार किया।

गीत

दीप हूँ जिसने अँधेरे से न अब तक हार मानी।

यह नहीं है बात बाती पर तिमिर टूटा नहीं हो
यह नहीं है बात काली रात में लूटा नहीं हो
यह नहीं है दूर प्राणों से रहे पीता प्रभंजन
मौत पर लेकिन सदा हँसती रही मेरी जवानी।
दीप हूँ जिसने अँधेरे से न अब तक हार मानी।

आँख रोयी तब रुदन था आज भी सम्मुख रुदन है
था विकल तब भी हृदय तो आज भी बेचैन मन है
और जब तक हूँ सदा ऐसे हृदय जलता रहेगा
जानकर यह मेरे पलकों तक नहीं आई रवानी।
दीप हूँ जिसने अँधेरे से न अब तक हार मानी।

हार सौ-सौ बार मन का धीर तो है डगमगाया
तीर तक सौ बार आकर हौसला है लौट आया
प्राण की यह साध ही बस बुझ न पाई है अभी तक
राह में भटके हुए हो खत्म साँसों की कहानी।
दीप हूँ जिसने अँधेरे से न अब तक हार मानी।

खोखली नींव

तुम ऊँची-ऊँची दीवारें लगे उठाने
कंगूरे मढ़े मीनार लगे सजाने
और नींव खोखली रह गई।

धसकेगा
पोला भराव है,
यह कैसा घर बना रहे हो
ऊपर से भारी दबाव है
ढह जाएगा
व्यर्थ साधना
श्रम का अपव्यय
पहले नींव भरो दृढ़
फिर दीवार उठाओ
कंगूरे-मीनारें-वन्दनवार सजाओ
यह तो झेल न पाएगा पहला पानी भी
क्योंकि नींव खोखली रह गई।

चतुर्दशपदी

अंधकार बाहर ज्यादा है या अंतर में ?
सोच-सोचकर हारा खोज नहीं पाता हूँ
नभ के तारे अधिक या कि व्रण मेरे उर के ?
उलझी इसी ग्रंथि को खोल नहीं पाता हूँ।
सागर के बुदबुद मेरी आँखों के आँसू,
तुम ही देखो इनमें कौन अधिक उर्वर है।
क्षोभित उच्छ्वासों में बहते हुए पवन में
तुलना कौन करेगा किसका वेग प्रखर है ?
मरुस्थल है वीरान कि विधवा साधें मेरी
नीला यह आकाश कि मेरा सम्वेदन है ?
मरघट की दग्धता जलन मेरे जीवन की
किसके हाथ बँधेगा जय का यह कंगन है ?
जग-भर की पीड़ा जिसके प्राणों का धन है,
उलझन उलझी अधिक अधिक या कवि का मन है ?

गीत

फूलों की बगिया बहो बहो बसर-बयारी,
इसलिए कि तुमको जीवन सरस मिला है।

तुमने मुझ-सा अवसाद नहीं पाया है
ऐसा मधुवन बरबाद नहीं पाया है
मुझसे मुझसे ये पूछ सिसकती कलियाँ
बरखा के जरा से गीली-गीली गलियाँ
सावन आया लेकिन बिन बरसे लौटा
मेरा मनभाया उजड़े घर से लौटा
प्यासा को पावस मिला नयन को पानी
मेरा जीवन धूलों की सेज बना है।
फूलों की बगिया बहो बहो बसर-बयारी
इसलिए कि तुमको जीवन सरस मिला है।

तुम जग और बहती आई पुरवाई
चाँदनी रहा झिलमिल अम्बर में छाई
आँधी में जली न जिस दीपक की बाती
वह क्या जाने छलनी होती है छाती
मैं जगा और झंझावातों ने घेरा
पतझार तिमिरयानी रातों ने घेरा

टिमटिमा रहा हूँ ! क्या कम है जलना हूँ
एेसे भी जग में कोई दीप जला है ?
फूलों की बगिया कहो कहो केसर-क्यारी
इसलिए कि तुमको जीवन सरल मिला है।

माना कुछ और प्राण हैं पीड़ावाले
लेकिन ममता थोड़ी है उनके छाले
शीतलता पहले मिली मिली फिर ज्वाला
मैंने तो केवल एक पीर को पाला
झिलमिलियाँ मिलीं कोई जलधार न लाया
तट मिला तुम्हें पर, मैं मझधार को भाया
छाया में तो संघर्ष मधुर होता है
मेरा राही आँचल के बिना पला है।
फूलों की बगिया कहो कहो केसर-क्यारी
इसलिए कि तुमको जीवन सरल मिला है।

तुम-सा इन प्राणों का शृंगार नहीं है
माधवी निशा मेरा संसार नहीं है
तपती सिकता-सा मगर इतना प्यासा
रह गई तृप्ति की भी न शेष अभिलाषा
लगता है जैसे जनम-जनम सपना है,
रस के मर्मों को झरना मुझे मना है,
अब तो बस इतनी साध न कह दे दुनिया
यह सूरज दीप बुझाए हुए जला है।
फूलों की बगिया कहो कहो केसर-क्यारी
इसलिए कि तुमको जीवन सरल मिला है।

वर्षगाँठ के दिन

आज एक वर्ष और बीत गया
जीवन का रिसता घट और तनिक रीत गया।
आज एक वर्ष और बीत गया।

ये जो चौबीस वर्ष जीवन के बीत गए,
बचपन की कली हँसी यौवन का फूल खिला
रूप रस गंध के झकोरों में हास हिली
अनुभव की रसना को जीने का स्वाद मिला
लेकिन दो पल पीछे हर कल जो आया था
प्राणों के पास राज गई पीर लाया था
रूप रस गंध बने दाहों के दीप जले
फूल मुस्काता रहा काँटों पर चरण चले
यह थी संग्रामभूमि घातों की भीड़ लगी
कभी ज्योति जीत गई कभी तिमिर जीत गया।
आज एक वर्ष और बीत गया।

अब गुर था स्वप्न बना जीवन की राहों में
तीव्र धूप दुपहर की पग-पग अंगारे थे
नागिन-सी स्याह-स्याह रात घिरी सावन की
चाँदनी पराई बनी डूबे सब तारे थे

अब मेरी दुनिया से ओझल उजियाला था
प्राणों का रोज नई पीड़ा ने पाला था
जीवन की नया को मिली तेज धारा थी
शबनम की बूँद बनी मुझ तक अंगारा थी
रूठी-रूठी बहार पतझर के हाथों से—
साथों का साथ-पात असमय हो बीत गया।
आज एक वर्ष और बीत गया।

अब जो भी दर्द मिला बहलाना सीख लिया
प्राणों की ज्वाला को गीतों में ढाल दिया
आँसू जो छलक पड़े शब्दों में गूँथ लिए,
सागर जो सोया था ऊपर उछाल दिया
दुनिया को गीत मिले मन को मनमीत मिले
जीवन के द्वार नई आशा के दीप जले
पीड़ा का कालकूट मैं पीना सीख गया
गीतों की छाँह तले अब जीना सीख गया
वाणी की शक्ति मिली अब मुझको दरवाजे
जो भी तूफान मिला मुझसे भयभीत गया।
आज एक वर्ष और बीत गया।

आँखों में आँसू हैं प्राणों में ज्वाला है
छाती पर बोझ लिए मैं पथ पर चलता हूँ
अधरों को भी ले जो जग का तम पी ले जो
बुझने को जन्मूँ किन्तु सूरज-सा जलता हूँ
ऐसा है फूल कौन झरने को खिले नहीं
ऐसा है दीप कहाँ बुझने को जले नहीं
उलझन से जीवन का यह रहस्य जाना है,
संसृति का एक सत्य मैंने पहचाना है

जन्म जहाँ मृत्यु वहाँ मृत्यु जहाँ जन्म वहाँ
वर्तमान होगा कल बस जो अतीत गया।
आज एक वर्ष और बीत गया।

आगत की चिंता का बोझ हुआ हलका है
अब आँसू आँखों के हीरे हैं मोती हैं
मन की हर साध मुझे सिन्दूरी लगती है
सत्य जन्मता है वेदना जो बीज बोती है
जग की व्यथा से हुआ आज बहुत प्यार मुझे
अपना-सा लगता है सारा संसार मुझे
फल बनी सागर-सी अब मन की गागर है
मेरी यह धरती है मेरा यह अंबर है
सूनापन डूब गया मैंने जग जीत लिया
मन को समवेदन-सा मिल मनमीत गया।
आज एक वर्ष और बीत गया।



बहार बाकी

उदास धरती उदास अम्बर, उदास राही उदास राहें
अभी सुमन का सिंगार सूना अभी चमन की बहार बाकी।

बड़ी तपन है घनी गगन है अधीर आहें बुझी निगाहें
थके-थके तन लुटा-लुटा मन अभी अमावस गयी नहीं है
अभी हवा में नमी न आई अभी दर्द में कमी न आई
अभी सवेरा सँवर न पाया अभी रोशनी खिली नहीं है
अभी न माटी उबर सकी है अभी न दुनिया बदल सकी है
अभी मुँदे हैं नयन तुम्हारे अभी नींद का खुमार बाकी।
अभी सुमन का सिंगार सूना अभी चमन की बहार बाकी।

वही सिलसिला हृदय-हनन का बचे हुए हैं बुझे नहीं हैं
वही धुआँ है वही अँधेरा अभी घृणा की पटी न खाई,
वही विषमता के हाथ काले कि इनकी स्याही धुली नहीं है
अभी कुमारियों की माँग सूनी अभी सिंदूरी सुबह न आई,
अभी पहाड़ों का बोझ सिर पर कसम तुम्हारी न टूट जाए,
अभी सृजन का सितार गुमसुम अभी प्यार की पुकार बाकी।
अभी सुमन का सिंगार सूना अभी चमन की बहार बाकी।

अभी कली मुस्करा न पाई अभी भ्रमर गुनगुना न पाए,
अभी चमन डबडबा रहे हैं अभी न आँसू बहल सके हैं

हवा मे पाँखें न तोल पाए, अभी पखेरू डरे हुए हैं
अभी आँधियाँ बहक रही हैं अभी न काँटे कुचल सके हैं
अभी उमगों के सर्द पाँवों की बेड़ियाँ काटनी पड़ेगी
अभी न लोहू तपा तुम्हारा अभी प्रलय पर प्रहार बाकी।
अभी सुमन का सिंगार सूना अभी चमन की बहार बाकी।



महात्मा गांधी एक श्रद्धांजलि

विश्व के सबसे बड़े वरदान मेरी वन्दना लो।

क्या तिमिर था पथ पर चलना तलक दूभर हुआ था
डगमगाना क्या सिसक जलना तलक दूभर हुआ था
और तब तुम-सा अभय-आशीष दुनिया को मिला था
आपदाओं का कलेजा भी जिसे देखा हिला था

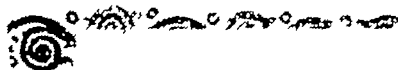
सत्य के सुलभ हुए संधान ! मेरी वन्दना लो।
विश्व के सबसे बड़े वरदान ! मेरी वन्दना लो।

मौन गुंजन थे चमन के फूल मुरझाए हुए थे
क्यारियाँ उजड़ी भयानक श्वास भरमाए हुए थे
जीभ कोयल की सिली थी 'पी कहाँ' के गान बन्दी
पर, जहाँ तुम रह न सकते थे वहाँ अरमान बन्दी

भूमि पर थे स्वर्ग का सामान मेरी वन्दना लो।
विश्व के सबसे बड़े वरदान ! मेरी वन्दना लो।

पी गए विष-कोष हमने पा लिया मधु-गान दानी !
प्राण देकर दे गए तुम जड़-जगत् को प्राण दानी !
काल तुमको खा गया ! या काल को तुम खा गए हो
मृत्यु चिरजीवन जहाँ उस बिन्दु तक तुम आ गए हो

वन्दना लो मुक्ति के सोपान ! मेरी वन्दना लो।
विश्व के सबसे बड़े वरदान ! मेरी वन्दना लो।



गाधी के प्रति

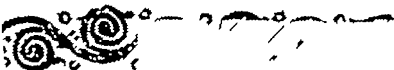
जब-जब तिमिर तरुण होता है
उजियाला उदास रोता है
तब तब इस धरती पर कोई
ऐसा एक दीप जलता है,
जो उजियाले को निखार दे
दीप दीप घर घर उजार दे।

जब-जब पतझर के दिन आते
विस्मय कली कुसुम कुम्हलाते
तब-तब इस धरती पर कोई
ऐसा एक सुमन खिलता है,
जो सारी बगिया सँवार दे
पतझर का पानी उतार दे।

जब जब पथ हुआ पथरीला
धूल धूल हो गया हठीला
तब तब इस धरती पर कोई
ऐसा एक चरण चलता है

जोकि पक पथ का बुहार दे,
प्राणों को जय की पुकार दे।

ऐसा एक दीप था गांधी
ऐसा एक सुमन था गांधी
ऐसा एक चरण था गांधी।



पन्द्रह अगस्त

कलियाँ चटकीं पंछी चहके नभ में ऊषा की लाली है
सुख के समृद्धियों के मधु से भर गई प्राण की प्याली है
मधु पव आज सब व्यस्त मस्त।
अभिवादन हे पन्द्रह अगस्त।

कितने महान बलिदानों की अनुपम साकार कहानी हो
भारत की तरुण तपस्या की तुम एक ज्वलंत निशानी हो
तुममें भावी की गति प्रशस्त।
अभिवादन हे पन्द्रह अगस्त।

अंकुर से तरु तरु से विशाल वट में परिवर्तित मुक्त फलो
जग भर का पी लो अंधकार, ऐसे निर्धूम प्रदीप जलो
अर्पित मन की श्रद्धा समस्त।
अभिवादन हे पन्द्रह अगस्त।

धरती पर जगे स्वर्ग उतरता आता है
पंछी पर खोल प्रभाती गाते आते हैं।

किसने तिनके से पथ का श्रम हटाया है?
सन्ध्या के मुख से किसने दाग मिटाया है?
छाती में सहज सहज पीर दुनिया भर की
किसने सुहाग का सुख-सिन्दूर लुटाया है?

भारत जो दुनिया भर में गौरवशाली है
भारत जो जग के मधुबन की हरियाली है
भारत निसर्ग में स्वर्ण-ताज का कोहनूर
भारत जो जीवन अम्बर की उजियाली है।

गीता का चिरवरदान दिया जिसने जग को
'तम से प्रकाश' उत्थान दिया जिसने जग को
'वसुधैव कुटुम्बकम्' का पावनतम महामंत्र
जीवन का दर्शन दान दिया जिसने जग को।

मस्तक को गौरव औ मन को अभिमान दिया
मंज़िल से आगे जाने का सामान दिया
भीगा के चरण धुलाए जो निर्धनता के
मन से कुटिया में सौंप तुम्हें भगवान दिया।

उस भारत की जय का यह पावन उत्सव है
जिसने नि असंभव कर दिखलाया संभव है
तलवारें नगिन अग्यागार चरण छूते
गूँजता चतुर्दिक भव्य महिमा का रव है।

धरती का बेटा पावन पर्व मनाता है
तरुवर-तरुवर हर्षित तालियाँ बजाता है
स्वागत के गान गगन में नहीं समा पाते
तोपों का स्वर नभ की छाती दहलाता है।

यह कली-कली प्राणों की साध फली फूली
पतझर का दर्प चढ़ा परिवर्तन की शूली
स्वर को सरगम वाणी को नवउल्लास मिला
नूतन पट पर नवचित्र आँकती है तूली।

इतिहासों के पृष्ठों की भाषा बदल गई,
चरणों की गति की वह परिभाषा बदल गई,
हो रहा नीड़ से देखो बिजली का विवाद
पीड़ा उदास आँधी की आशा बदल गई।

मेरे भारत ! स्वीकार करो वंदन कवि का
प्रतिरूप तुम्हीं हो अँधियारे जग में रवि का
पथ-दर्शक संसृति-गति के तुम अनुपम अजेय
बन सका न मुझसे पूर्ण चित्र पावन छवि का।



ज्योति-पर्व

धरती और गगन के दीपों का आलोक-समन्वय
सौ-सौ हाथ उठा आभा के बोला जीवन की जय।

दीप-दीप की प्राण-ज्योति से अक्षम तम ललकारा
फहरा केतु अगर ज्वाला का कुटिल अँधेरा हारा
अभिषेकित नर प्रतिमा मंदिर बनी जगत की कारा
ज्योति न हारी कभी न हारेगी पय यह निस्संशय।
धरती और गगन के दीपों का आलोक-समन्वय
सौ-सौ हाथ उठा आभा के बोला जीवन की जय।

गई अमावस झूम रही झिलमिल दीपों की पाँतें
कहीं कन्दराओं में गुमसुम बैठे तम की बारातें
लपट-लपट को चूम चिनगियों की तन रहीं कनातें
दमक रही कुन्दन-सी धरती जगमग अम्बर आमय।
धरती और गगन के दीपों का आलोक-समन्वय
सौ-सौ हाथ उठा आभा के बोला जीवन की जय।

अब न रहे प्रच्छन्न तुम्हारे तल में भी अँधियारा
प्राण-प्रदीपो ! झुककर भी तुम पी लोगे तम सारा

आज शपथ लो नहीं झुकेगा गौरव-मान तुम्हारा
बिखर यह आलोक सर्वदा टले नहीं यह निश्चय।
धरती और गगन के दीपों का आलोक-समन्वय
सौ-सौ हाथ उठा आभा के बोला जीवन की जय।

शुभ कामना

छब्बीस जनवरी ! क्या हो वन्दन तेरा
तेरी पूजा मे कौन गीत मैं गाऊँ ?
हर प्राण तुम्हारे गौरव म डूबा है
यह गाथा मैं किन छन्दों में दुहराऊँ ?

यह जो हरीतिमा ओढे धरती फैली
यह जो सतरंगी अम्बर झूम रहा है
यह जो कारा को तोड निकल आया है
आजाद पवन खेतों मे घूम रहा है।

यह जो फूलों ने आँख खोलकर देखा
यह जो भौरों की भीड चली आती है
यह निर्झरिणी जलतरंग सी बहती
ये जो नदियाँ कल-कल ध्वनि म गाती है।

यह जो गुलाल बरसाती आती ऊषा
यह जो किरणों क दल मधसे आते हैं
पगों भर भरकर बरते हुए विमोमें
किसकी बिरुदावलि ये पंछी गात है ?

यह सब तेरे स्वागत का साज सजा है
छब्बीस जनवरी कौन गीत मैं गाऊं?
संसार तुम्हारी छाया में चेतन है,
यह गाथा मैं किन छन्दों में दुहराऊं?

यह दिन क्या कभी भुला पाएगा भारत!
यह दिन जब पहला सूरज मुसकाया था
यह दिन कि हिमालय ने सिर उठा लिया था
इतिहास नये साँचे में ढल आया था।

'रावी' के तट पर एक ज्योति जागी थी
जिसने तम के तन में दरार डाली थी
उस दिन ज्वाला बरसाती देखी जग ने
हर आँख कि जो पहले आँसूवाली थी।

दर्दीले गीत भैरवी बनकर जागे
आँधी की तूफानों से हुई सगाई,
आज़ाद जिएँगे हम आज़ाद मिटेंगे
सौ सौ कंठों ने उठ आवाज़ लगाई।

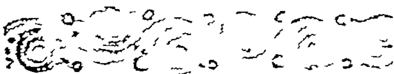
गोलियाँ खुले सीनों पर हँसकर झेलीं
फाँसी की डोरी हमें बनी वरमाला
छब्बीस जनवरी! तेरी छाया में हम
लाए तम के हाथों से छीन उजाला।

तब से प्रभात को छू न सका है कोई,
हम प्रगति पथ पर बढ़े चले आते हैं
संहार मचाए दीप खड़े हैं आग
अत्याचारों पर चढ़े चले आते हैं।

श्रम के हाथों से हम युग के खंडहर पर
अपना घर नये सिरे से बना रहे हैं
यह मंदिर अब वीरान न हो पाएगा
दुनिया को खुली चुनौती सुना रहे हैं।

अस्सी करोड़ हाथों ने आगे बढ़कर,
तेरे पथ के कांटों को बीन लिया है
छब्बीस जनवरी! मेधा के घर बन्दी
हमने तेरा जीवन रस छीन लिया है।

फहराएगी यह विजय ध्वजा ऐसे ही
छब्बीस जनवरी! जय हो तेरी जय हो
कामना हमारी तू फूलों से खेले
तेरे आँगन की सुख समृद्धि अभय हो।



वीणा और तलवार

ज़रा तोलो तराजू पर कि किसकी मोल भारी है
तुम्हें तलवार प्यारी है हमें झंकार प्यारी है।

भरो तुम हर बगीचा आँसुओं चीखों-कराहों से
मगर हम हर बगीचा फूल-शबनम से सजाते हैं
पिए हो आदमी के खून में डूबे दुधारे तुम
खड़े हम युद्ध के मैदान में वीणा बजाते हैं,
करो तुम मौत की पूजा जलाओ दीप मरघट में
जवानी की हमेशा आरती हमने उतारी है।
तुम्हें तलवार प्यारी है हमें झंकार प्यारी है।

बुला लाए मगर तुम द्वार पर पतझर ज़माने के
हमारे भी सवालों में बहारों की कमी है क्या?
लगाओ आग बरसाकर अंगारे देख लो तुम भी
हमारी झमझमा में फुहारों की कमी है क्या?
बजाओ भेरियाँ तुम हम मगर मल्हार गाएँगे
करो तुम ध्वंस हमने सजना हरदम दुलारी है।
तुम्हें तलवार प्यारी है, हमें झंकार प्यारी है।

ज़रा बीते हुए इतिहास के पन्ने पलट देखो
यहाँ जितने हुए तलवार की जय बोलनेवाले

चले थे सत्य की आवाज़ को परों कुचलते जो
यहाँ जितने हुए हैं सिंधु मे विष घासनेवाले
सभी ने एक दिन भू पर पटकी वीणा उठाई है
सभी न एक दिन इसकी रुँधी सरगम सँवारी है।
तुम्हें तलवार प्यारी है हमें झंकार प्यारी है।

बुनो हर बार तुम संसार के तन पर कफन काला
उठें हम और उड़कर उस तबाही को दफन कर दें
जहाँ तुम एक घर तोड़ो वहाँ हम ताज बनवा दें
जहाँ बगिया उजाड़ो तुम बहारें हम वहीं भर दें
जहाँ दीपक बुझाओ तुम वहाँ सूरज उगाएँ हम
अँधेरे से उजाले की लगन अब तक न हारी है।
तुम्हें तलवार प्यारी है हमें झंकार प्यारी है।



शांति-दूत

रणभेरी बन्द करो अब मेरी धरती पर,
संहारों के ये गीत न गाए जाएँगे।
तलवारें अब लोहू से नहीं नहाएँगी
बेमौसम नन्हे फूल नहीं मुरझाएँगे।

छाया विनाश का यह जो घना अँधेरा है
रवि के अंगारों में इसको जलना होगा।
जीवन की लता फली फूली लहराएगी
पतझर के पैरों को पीछे हटना होगा।

आओ विनाश ! अपनी ताकत अजमा देखो
सोनेवालों पर वार किया क्या वार किया ?
इतना आभार मानते हैं हम भी तेरा
तेरी चोटों ने बहुत बड़ा उपकार किया।

हम एक-दो नहीं आज एशिया के जवान
दुनिया भर का विष पी जाने को बेबस हैं।
सिर कफन बाँधकर, दीप हथेली पर लेकर,
अपना पावन परचम लहराने निकले हैं।

आ बैठ ठंडी साँसों में संतप्त पवन
नयनों म मधर उठी पौरुष की ज्वाला है।
सोए अरमानों न आकाश छू लिया है
वाणी म पांचजन्य का घोष निराला है।

अंगारों पर धर चरण चले हैं दीवाने
है कौन एशिया का जो शीश भुकाएगा?
कारवाँ शांति के दूतों का निकला घर से
मंजिल से पहले कदम नहीं लौटाएगा।

धरती करवट बदलती डोला आसमान
सँभलो सँभलो भूगोल बदलनेवाला है।
रौंदन लगा है हिन्दमहासागर का जल
मंथन से कोई रत्न निकलनेवाला है।

गंगा की लहरों म यह कैसी हलचल है
गिरिराज हिमालय न क्यों शीश उठाया है?
इतिहास गुल गए हैं किसकी अगवानी में?
कारवाँ शांति के दूतों का बढ़ आया है।

घन्टे बजते हैं सोमनाथ के मंदिर के
एलोर अजंता की प्रतिमाएँ बोली हैं।
कारवाँ शांति क दूतों का बढ़ आया है
बापाओं ने गुद अपनी गाँठें खोली हैं।

कारवाँ शांति क दूतों का यह नया नहीं
हमने दुनिया को सत्य राह दिखलाई है
जीवन की जय के गीत सदा हमने गाए,
पीढ़ियाँ जिन्हें अब तक दुहराती आई हैं।

यह सत्य-कर्म की महिमा गीता का सारा
वसुधा कुटुम्ब है हर मनुष्य से प्यार करो।
धरती के नक्षत्रो ! अँधियारे पर टूटा
मिट जाम्रो पर मानवता का सत्कार करो।

अभियान 'बुद्ध' का शांति-अहिंसा का नारा
एशिया न केवल विश्व झुका जिसके आगे।
'गांधी' जिसकी वाणी की तुलना नहीं मिले
क्या कहूँ काल का दर्प थका जिसके आगे।

'नेहरू' के फौलादी हाथों की यह मशाल
रोशनी दे रही है जग के अँधियारे को।
हिंसा के भक्तो ! छीन नहीं पाओगे तुम
जगमगा रहे मानव के भाग्य सितारे को।

यह कोटि-कोटि बलिदानी वीरों का प्रयाण
इतिहासों की कालिख धो देने आया है।
एशिया शांति का दूत एशिया ध्वंस नहीं
बूढ़े युग का अंगार, जवानी लाया है।

कैसा विरोध ? कैसी विपदाएँ ? कैसा गम ?
यह गीत शांति का जग भर को गाना होगा।
सौ बदल देखकर भी विनाश के आज हम
अमरता को धरती पर उतार लाना होगा।



पसीना

पसीना हूँ पसीना हूँ
धरा के भाल पर जगमग जड़ा जो वह नगीना हूँ।
पसीना हूँ पसीना हूँ।

नगीना हूँ कि जिसकी ज्योति से सूरज लजाता है
अँधेरे का न कोई दाँव जिसको जीत पाता है।
पतन के पाँव जिसके द्वार की देहरी न छूते हैं
कि जिसके हौसले अब तक पराजय से अछूते हैं।
जगत के आदि से अब तक थकन मुझ तक नहीं आई
कभी मन को निराशा की झलक मुझ तक नहीं आई।
हज़ारों बार आतप ने जलाने की मुझे ठानी
बहुत समझा चुका था मैं मगर मेरी नहीं मानी।
सदा संघर्ष का आदी किसी से मैं नहीं हारा
मिटाने को मुझे आई मगर खुद मिट गई कारा।

गई-गुज़री हुई है बात पर, बिलकुल नई-सी है,
कभी आई कमी की रात पर, बिलकुल नई-सी है।
प्रलय ने ताप भर भरी मगीर्था रौंद डाली थी
कि उनकी बिजलियाँ कैसी भयानक कौंधवाली थीं।
मुसीबत की घटाओं का गजब ही दौरदौरा था
विनाशी उन हवाओं का गजब ही दौरदौरा था।

मिटाना चाहती वह नाम तक मेरी कहानी का
मगर जानी न थी वह मौत इस मनमाम पानी का।
समझती थी कि मैंने जिन्दगी को अब मिटा डाला
मगर यह आदमी की शक्ति से उसका पड़ा पाला।

प्रलय के बाद बिलकुल ही अकेला रह गया था मैं
समय के हाथ उजड़ा एक मेला रह गया था मैं।
तभी मेरी जवानी का अमर अभिमान जागा था
अरे! टकरा गया किससे मरण सचमुच अभागा था।
प्रलय के बाद जितने थे सभी को झेल आया मैं
भवर के आँधियों के साथ जी भर खेल आया मैं।
हलाहल पी गया इतना अमरता बन गई मेरी
स्वयं बंधन बँधे पर, बँध नहीं पाई प्रगति मेरी।
मरण के शीष पर धर पाँव चलता आ रहा हूँ मैं
मुझे रोको मुझे रोको चुनौती गा रहा हूँ मैं।

नहीं तकदीर कोई और, मैं तकदीर दुनिया की
पलक झपके नहीं मैं तोड़ दूँ जंजीर दुनिया की।
समय का चक्र चाहूँ मैं उसी रफ्तार से घूमे
नयन खोलूँ कि हर बाधा मुझे आकर चरण चूमे।
कहाँ भयभीत दौड़े जा रहे हो ? तुम इधर आओ
विजय के हार छोड़े जा रहे हो तुम इधर आओ।
पसीना हूँ मुझे ले लो नदी के पार उतरो तुम
न हो भयभीत कुन्दन की तरह सरताज निखरो तुम।

सृजन की पुस्तिका के पृष्ठ बिखरे, जोड़ लाया हूँ
मनुजता की वही विपरीत धारा मोड़ लाया हूँ।
भरा युग-युग पड़ा जो पाप का मैं फोड़ आया हूँ
हमेशा के लिए मैं हाथ यम के तोड़ आया हूँ।

पसीना हूँ मुझे मरु में नया मधुबन खिलाना है
भगीरथ हूँ मुझे भू पर नई गंगा बुलाना है।
पहाड़ों को करूँ समतल कि सागर छान डालूँ मैं
मनुजता की अँधेरी राह में नवदीप बालूँ मैं।
नहीं अपमान मेहनत का अधिक अब सह सकूँगा मैं
न बन्दी स्वर्ण-कारा में अधिक अब रह सकूँगा मैं।
नहीं सोता रहूँगा अब मुझे दुनिया बदलना है,
विषमता के गर्त से अब मुझे बाहर निकलना है।
मुझे जग के करुण अन्याय की होली जलाना है,
ज़माना सुन मुझे अब द्वार पर मंज़िल बुलाना है।

हँसेंगे खेत हरियाली नई दुलहन रचाएगी
धरा नव चिर सजी दुलहन बनेगी मुस्कुराएगी।
जगत के भाग्य के तारे घटाओं में न डूबेंगे
किसी के पाँव पथ के कण्टकों से अब न ऊबेंगे।
भटकते हो नहीं क्या रास्ता तुमको मिला अब तक?
पहुँचना चाहते हो स्वर्ग? बस मैं एक ज़ीना हूँ।
धरा के भाल पर जगमग जड़ा जो वह नगीना हूँ।
पसीना हूँ पसीना हूँ।



दीपावली एक प्रतिक्रिया

रोशनी की क्या कमी ! दीपक हजारों जल रहे हैं
रात है पर, ज्योति के निर्झर अचिंतित गल रहे हैं।

पर्व दीपों का मनाई जा रही दीपावली है
ये कतार लोचनों को लग रही कितनी भली है।

हर नगर, हर द्वार, दहरी मोद में डूबी हुई है
चेतना मेरी न जाने क्यों मगर, ऊबी हुई है।

है बहुत बाहर उजाला पर, सघन मन का अँधेरा
खिल न पाता बातियों के साथ दागी प्राण मेरा।

एक दारुण स्वप्न मन की आँख में अंगार जैसा
जल रहा निर्धूम जिसके क्रोड में संसार कैसा।

झिलमिलातीं ये निशा की रश्मियाँ चिनगारियाँ हैं
देखता हूँ जल रहीं इनमें धधक फुलवारियाँ हैं।

क्या करूँ ! तुम-सी अमित आँखें नहीं मुझको मिली हैं
सर्पिणी मीचे न दगूँ देख लूँ कलियाँ खिली हैं !

पथ दीपों का जहाँ दगो दिवाली के दिये हैं
पर, मुझे लगता कि इनके कंठ विष जैसा पिये हैं।

मैं घटाएँ देखकर पहचान लेता हूँ प्रभंजन
फूल की ले ओट मुझको वज्र देते हैं निमंत्रण।

हर हँसी के पास देखो आँसुओं की वह झड़ी है
दिल जला कोई मुझे लगता कहो तुम फुलझड़ी है।

यह भभक जैसे कि बुझने के लिए तैयार हैं हम
ले अँधेरे से कि तेरी भूख का अधिकार हैं हम।

एक अन्तिम साँस कहती है कि धड़कन थम रही है
हर शिरा मेरी यही अवसाद छूकर जम रही है।

इस पराजय को विजय का गीत कैसे मान लूँ मैं ?
इस भुलावे को हृदय-संगीत कैसे मान लूँ मैं ?

तुम मनाते हो दिवाली और मेरी आँख छलकी
इस प्रभा के पार मुझको दिख रही तसवीर कल की।

यह कड़क कैसी ? कहाँ की गर्जना ? विस्फोट कैसा ?
स्वप्न है शायद मगर है सत्य का संकेत जैसा।

यह घटा कैसी जमाने को धुएँ ने भर दिया है
हर कली को एक जहरीली लहर ने छू लिया है।

घुप अँधियारा सूझी आँखें न कोई राह सूझे,
फट पड़े ज्वालामुखी तब कौन जिसकी बात बूझे ?

चीख हाहाकार, जीवन से मरण सुस खेलता है
कौन यह इन्सानियत के पाँव पीछे ठेलता है ?

हाय यह तो आदमी मुझ-सा हृदय-मस्तिष्कवाला
साधना जिसकी रही देती जमाने को उजाला।

सृजना के दूत! तेरी चेतना को हो गया क्या ?
आत्मा का वह दिया सचमुच सहमकर सो गया क्या ?

तू कि जिसने भूधरों को इंगितों पर था नचाया
तू कि जिसने दर्पशाली नील अम्बर को झुकाया।

तू कि जिसने पत्थरों को सहज बन्दा बनाया
तू कि जो आकाशवाला स्वर्ग भू पर खींच लाया।

कौन-सी यह भूख ? अपनी सर्जना को खा गया है
पाशविकता के चरम उत्कर्ष तक तू आ गया है।

यह धधकती आग शोलों-सी कि'अणु-उद्जन'करों में
ध्वंस की विकराल वीणा आग वस जिसके स्वरों में।

आदमी! पत्थर! जरा इस ओर करुणा से निहारो
एक पल को आँख से यह दम का परदा उतारो।

वह कि जो मन की उमंगों से पगी बाती जलाती
सिर्फ मुसकी से कि जो हर दीप में कनियाँ खिलाती।

दूध-सी निर्मल हथेली पर कहाँ शोले भरोगे ?
पोंछकर सिन्दूर इसकी माँग में काजल भरोगे ?

और यह मनुष्य का जो भाग लेकर चल रही है,
एक सपनों की नई दुनिया कि जिसमें पल रही है।

क्रोध में ही तुम कुचलना चाहते संसार इसका
हाथ इतना तो नहीं सस्ता सनातन प्यार इसका।

यह बगीची यह छटा यह रूप जलने को नहीं है
क्यारियाँ जो खून से सींची उजड़ने को नहीं हैं।

यह बहन-बेटी कि ये माँ-बाप ये भाई हमारे
और ये ऊँची नज़रवाले कि हमराही हमारे।

पैर अपने काटकर तुमको न जाने क्या मिलेगा?
सोच ले जो भी जलेगा घर कि वह तेरा जलेगा।

और अब भी तू नहीं बदला अगर अभिमानवाले
तो उठा ले और ऊपर हाथ शस्त्रों के उठा ले।

सुन जवानी मौत की ललकार से डरती नहीं है
जानती है देह नश्वर आत्मा मरती नहीं है।

सुन कि मैं इन्सान हूँ तुझको चुनौती दे रहा हूँ
आज दुनिया की तपन का बोझ सिर पर ले रहा हूँ।

आदमी जिसको प्रलय तक भी न ऐसी सीख पाई
व्यर्थ तूने धूलि धनु की इन गुमाया पर उड़ाई।

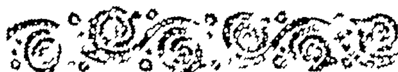
है अभी जीवित अभी रचना अभी हारी नहीं है
फूल के दिन हैं अभी अंगार की बारी नहीं है।

दलता है वह कि जो चट्टान पर अंकुर उगा है
यह न जड़ता से हिला है यह न आँधी से डिगा है।

आदमी की आह से मत खेल रे! जलना पड़ेगा
कल तुझे अंगारवाला पथ बदल चलना पड़ेगा।

रोशनी की क्या कमी दीपक हजारों जल रहे हैं
रात है पर, ज्योति के निर्झर अचिंचित गल रहे हैं।

पर्व दीपों का मनाई जा रही दीपावली है,
ये कतारें लोचनों को लग रही सचमुच भली है।



विप्लव

ज्वालामुखों की गरज कड़क झंझा की भूचालों का कंपन
बरसाती की उफनी वेग सरिता का मैं सागर का मंथन।
दीर्घ कड़क हूँ मैं बिजली की सुनकर फट जाएगी छाती
जहाँ गिरी मिट गए पुराने नये-नये अंकुर सरसाती।
आहों में पलती कराह में खिलती मस्त जवानी मेरी
आँसू में हँसती दाहों में अनल उगलती वाणी मेरी।
बाधा की चट्टान फोड़कर बहता सीधा मैं वह झरना
मुझे लगा तो फिर कौन-सा कठिन सिंधु के पार उतरना।
कूल-कगारों में बँधकर बहनेवाली मेरी न धार है,
हर आँधी के लिए जीर्ण कुटिया का मेरा खुला द्वार है।
मैं आता हूँ युग की धुँधली सड़ी-गली तसवीर बदलने
कृपा की माला में जकड़े पाँवों की जंजीर बदलने।
मैं आता हूँ नये जमाने की फूटी तकदीर बदलने
जोकि धरम पर बस पाप की आता हूँ तासीर बदलने।
अपनी पर आ जाऊँ जो मैं यह जर्जर व्यापार बदल दूँ
गीत बदल दूँ राग बदल दूँ बीन बदल दूँ तार बदल दूँ।
कोयल की मादक वाणी में जग का हाहाकार बदल दूँ
एक धाम क्या? एक नगर क्या? मैं सारा संसार बदल दूँ।
गीतों की कराह से उठती दर्द भरी आवाज बदल दूँ
साज बदल दूँ नाज बदल दूँ तख्त बदल दूँ ताज बदल दूँ।

स्वर्ग बनाऊँ दीप घास का धरती की आरती उतारूँ
कोटि-कोटि तारे पिघलाऊँ, मैं माटी के चरण पखारूँ।
देवों के नन्दन की सुषमा वसुधा के मरुथल पर वारूँ
एक गगन के पास धरा पर सौ-सौ सूरज चाँद सँवारूँ।
ज्वालामुखियों के विस्फोटक अट्टहास-सा मेरा गर्जन
क्षुद्र पाप के घट कब तक कर पाओगे अपना संरक्षण?
युग की तरुण चेतना अपना रक्त-स्नान कर जिसे जलाती
सावधान मनचली आँधियो! बुझा सकोगी मेरी बाती?
कुटियों में से जन्म महल की मीनारों के दर्प हिलाऊँ,
प्राण प्राण को स्वाभिमान पर मर मिटने का मन्त्र सिखाऊँ।
मेरी भूख विचित्र भूख खाता हूँ और प्यास पीता हूँ
पीड़ा दैन्य गरीबी आँसू शाप-ताप लेकर जीता हूँ।
तृप्त न तब तक जब तक जग में अन्यायों का दोष लेप है
गगन उदासी में डूबा है यह धरती सह रही क्लेश है।
सावधान ओ बेबस हाहाकारों पर इतरानेवालो!
धरती को निर्दोष रक्त की धारा में नहलानेवालो!
इतिहासों के पृष्ठ स्वार्थ की स्याही से रँग जानेवालो।
कंकालों पर सोने-चाँदी के मीनार सजानेवालो!
इंगित एक बदल जाएगा दुनिया का पल-भर में नाका
तनी रहेगी सदा-सदा नभ छूती मेरी न्याय-पताका।
इस जीवित गाथा में कलम रख देता हूँ मैं चिनगारी
ये जगती हैं इधर गुफाएं उधर खोजतीं प्रलय विचारी।
कैसा मस्त जुनून हाथ से देती धीप उतार जवानी
कैसा मस्त जुनून कि पी मैं अंजलि स सागर का पानी।
जिनकी रोटी छीन रहे हो यही तन्त्र छीन लें तुम्हारा
इनके हाथ उठें सुद पास नहीं आए वह कौन किनारा?
इतिहासों के पृष्ठ पृष्ठ से पूछो मेरी रामकहानी
युग करवटें बदलते जब-जब मचले मेरी क्रुद्ध जवानी।

बदला है भूगोल समय ने ली है जी-भरकर अँगड़ाई,
धरती आसमान बनती है बनते हैं पहाड़ लघु राई।
जर्जर तिनके चट्टानों की छाती छेद चले आते हैं
धरतीवाले कदम गगन का हँसकर वेध चले आते हैं।
बना 'कृष्ण' का रोष कालिया के फन पर मैं चुनकर नाचा
कलुष पाप के नाग नहीं सह पाते मेरा एक तमाचा।
बना 'राम' के कर का सर-धार फोड़ी अहंकार की छाती
ललकारा तो रात ढल गई विहग मुग्ध गा उठे प्रभाती।
चमकारा तो आसमान की किरणों ने सोना बरसाया
ललकारा तो मधुमासों ने धरती को मखमल पहनाया।
'शंकर' का तीसरा नेत्र हूँ युग परिवर्तन की आँधी हूँ
सुधा न मेरे पास गरल हलाहल देने का आदी हूँ।
डरो नहीं यह कालकूट के घूँट कि हँसकर पीते जाओ
जहाँ मौत मर जाय वहाँ तुम निर्भय होकर जीते जाओ।
आँखें खोलो मुल्क समाप्त हुआ करते हैं सोनेवाले
सपनों के क्षण तन्द्रा के अलस-जग में खोनेवाले।
धरती की छाती पर बोझा हैं कि मौन भय ढोनेवाले
रखे शीश पर हाथ किनारे बैठे बैठे रोनेवाले।
भवरों से खेलो लहरों में उठकर अपनी तरी तिराओ
छाती चीर चलो पानी की उठती लाटों से टकराओ।
आँसू बाँट रहे हो जग में? सदा मधुर मुसकान लुटाओ
उर में घाव सँवारो पीर सहेजो मीठे गान सुनाओ।
जियो तब आदमी और आदमी बने मर जाना होगा
एक साँस भी शेष कि जब तक, काँटों पर मुसकाना होगा।

गणतन्त्र दिवस

गणतन्त्र दिवस है आज मोद का महापर्व
जनता के बलिदानों की अमर कहानी है।
उस पूँजी का सम्मान आज हम करते हैं
आज़ादी की कीमत जो पड़ी चुकानी है।

वर्गों भेदों के कवच भेदकर हम अनेक
इस भिन्न समता के सूत्र खोजकर लाए थे।
संघर्षों में जूझे बाधाओं से उलझे,
लड़ते भिड़ते अपनी मंज़िल तक आए थे।

मिट्टी खोदी थी एक बगीचा सींचा था
उसमें विकास के कुछ अँखुए उगवाए थे।
कसम खायी थी सब डालियाँ छोटी थीं
वर्षों में पहली बार जरा मुसकाए थे।

छँट गया अँधेरा था पर दूर सवेरा था
हमको प्रभात की लाली अभी बुलानी थी।
किरणें फूटी पर, शबनम बरस न पाई थी
सूखी-मुरझाई बगिया अभी खिलानी थी।

आज़ादी मिल जाना बस मित्र ! नही काफी
उसकी रक्षा का बोझ और भी भारी है।
आज़ादी मिल जाए जैसे हम नींव रखें
यह आगे भवन बनाने की तयारी है।

आधारशिला रखकर हम हाथ रोक बैठे
साथी ! सच मानो हमसे भारी भूल हुई।
परिणाम यही होना था फूल बने काँटे,
सपनो की केसर महक न पाई धूल हुई।

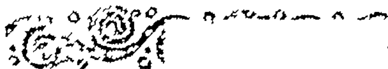
गणतंत्र दिवस है आज मगर फीका-सा है
मन की उमग का रंग नहीं खिल पाया है।
अब तक मस्ती पर पड़े भूख के तासे हैं
अब तक अभाव की जम प्राणो पर छाया है।

दिन पर दिन और साल पर बीते चले साल
सूरज का तेजस्वी मुखड़ा न दिखाता है।
अब तक साधों का पोत पीर के सागर म
डगमग डगमग डूबा डूबा उतराता है।

झंडियाँ झालरें बाजे दीपक मालाएँ
रेखा पीटना मात्र सच्ची अभिव्यक्ति नही।
सब तक हर पर्व अधूरा है भाई ! जब तक—
जनता के तन मन मे आ पाई शक्ति नही।

त्योहार मनाना चाहो तो सबसे पहले
भूखी नंगी इस जनता को समृद्ध करो।
झंडियाँ दिखाकर समय गँवाने से पहले
निर्धनता और अभावों से तुम युद्ध करो।

दो-चार किनारे पर पहुँचे तो क्या पहुँचे
पहले पूरा बेड़ा का बेड़ा पार करो।
तुम कहो आज छब्बीस जनवरी आई है
झंडियाँ हिलाओ चाहे जय-जयकार करो।



अमर प्रभात

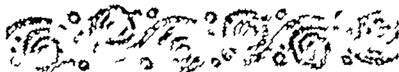
अब मनुजता की निशा का अंत आता जा रहा है पास
चेतना के बाल रवि ने धो दिया नीरव असित आकाश।
तम भरे जग की शिथिलता में अरुणिमा यह नवीन विकास
खेलता है फूल के निष्प्रभ अधर से अब अनोखा हास।
आज महत्त्वाकांक्षाओं ने मनुज की
पा लिया खोया हुआ आलोक।
फेंक दी है आज युग ने आज जड़ता की कलुष निर्मोक।
ढल चुकी भेदों भरी, विद्वेषमय पंकिल पुरातन रात
आज नूतन चेतना नवस्फूर्ति नवनिर्माण पूर्ण प्रभात।
यामिनी का स्याह आँचल चीरकर आरक्त पुलकित तीर—
नवकिरण के
छिद्र करते पाशविकता के घने प्राचीर।
उड़ चले गाते हुए नवराग नूतन गान विहग विभोर
नाप लेंगे जीर्ण पंखों से धरा के और नभ के छोर।
तोड़ तन्द्रा के अपावन पाश जन-जन कर्म-व्रत रत
कौन रोकेगा ?
बढ़ेंगे अब चरण मेरी मनुजता के अप्रतिहत।
मनुज-मनुज समान हैं
हैं व्योम के यह नखत-नखत समान जैसे।
किरण में औ' किरण में भी भेद !

कैसा भेद ?
लूँ मैं मान कैसे ?
सब चलेंगे आज कंधों पर उठा मिलकर बराबर भार
राह के काँटे अकेला एक छाँटेगा नहीं
सबको सहज स्वीकार।
पीर की सीमा इकाई के न होगी साथ
यह प्रत्येक लेगा बाँट
आज मेरी जीर्ण लघुता के तरीक सामने
झुकने लगे हैं भार।
सत्य विजयी है सदा से
और जीतेगा सदा यह एक शाश्वत सत्य।
काँपता है पथ पगों से
आज मेरी जीत पर नगराज है कृतकृत्य।
आज सबका त्याग श्रम अंकुर बनेगा
ऊर्ध्व तरुवर सघन छायादार,
गोद में जिसकी शरण लेगा थका संसार।
यह सवेरा अब सवेरा ही रहेगा ढल चुकी है रात
आज स्वागत है तुम्हारा
ओ मनुजता के अमर प्रभात !

तुलसी-रत्ना-वन्दन

संस्कृति के निस्पंद शून्य मानस को धड़कन देनेवाले !
स्वीकारो इस क्षुद्र लेखनी का अपूर्ण तुलसी अभिवादन ।
दबी पिसी जर्जर मानवता के प्रबल प्रेरणा प्रवचन ।
तुम सुहाग मेरी हिन्दी के चेतनता तुमसे चिरन्तन ।
पहली बार धरा पर खोली आँख और जय राम पुकारा
दिशा-दिशा में गूंज गया स्वर 'राम राम जय राम' तुम्हारा ।
पले 'नरहरी' स्वामी के गृह भीख माँग बीता शैशव-क्षण
और एक दिन स्वाभाविक सपने आए यौवन धन चंचल ।
'रत्ना' मिली कि जैसे उजड़े मानस को शृंगार मिल गया
सुरभि मिली शीतल लहरी से अवगुण्ठित मन-सुमन खिल गया।
रत्ना थी रत्ना अब केवल रत्नामय तुलसी की रग रग
प्यार और ममता की छाया ही तुलसी का अब सीमित जग ।
एक दिवस सहसा चिरसंगिनि जा पहुँची जब अपने पीहर
सह वियोग-गम पावक-ज्वाला रह न सका कोमल मन चंचल।
घनी अँधेरी भीषण रजनी चढ़ी बाढ़ सरिता प्रलयंकर
विरह-दग्ध व्याकुल अन्तर को लगा कल्प वह एक-एक पल ।
भूल गए प्राणों की बाजी लगा कहाँ देही की ममता ?
तट स्नेह की धुन सहसा सागर की गहरी ममता ।
बाँध लिया बढ़कर बाँहों में विस्मय में अवाक सुन चितवन
इतना स्नेह राम में होता निश्चित हम दोनों तर जाते

हाड़-माँस की नश्वर काया पर यह कैसी ममता प्रियतम !
तिरस्कार से क्षोभ घृणा से बोल उठी रत्ना प्रभुसाथ।
एक तिरस्कृत लघु पल केवल बदल गया जीवन की धारा
एक अक्षय दीप बन तुम दास बना जिसका अँधियारा।
आज तुम्हारे साथ प्रथम वन्दन करता हूँ उस नारी का
अंधकार के धुँधले पथ की चिरआभासित उजियारी का।
बुझी हुई प्रतिभा की बाती अविनश्वर आलोक बनी तुम
क्यों न करूँ अभिवादन बासी लौ की पहली चिनगारी का।
तुम न अगर होतीं कल्याणी ! तुलसी कैसे तुलसी होते ?
तुम न प्रभा की धारा बनतीं कैसे खिल पाता यह मधुवन ?
तुम प्रवाह बनकर आई थीं तब खुल पाए थे अन्तर्दृग
मानस का प्रासाद तुम्हारी अमर प्रेरणा का पावन धन।
भू-असका का सामंजस्य प्रथम जीवन-स्पंदन-अन्वेषण
जन-जन की गूँगी वाणी का तरी कला बनी अभिव्यंजन।
जीवन का प्रत्येक पक्ष उस अमर लेखनी से आलोकित
सौरभमयी अमर शिरोमणि! जबतक है जग-जीवन विकसित।
बर्बरता को खुली चुनौती दी तुमने अपनी कविता से
मानहीन मरता का तुमने स्वाभिमान का मंत्र पढ़ाया।
सत्य न्याय उत्सर्ग प्यार, समवेदन की भाषा सिखलाई,
अहंकार मिथ्या महानता गिरि पर, लघुता-केतु चढ़ाया।
ढही मिटी किंतु तुलसी के गीत अमर, भावना अमर है
जबतक धरा-गगन रवि-शशि हैं मानस जन-जन का चिरसंबल
तब तक रावण सोने की लंका के साथ जलेगा भू पर,
राम विजयश्री शोभित प्रतिपल जीवन का सिंहासन अविचल
युग-युग तक खण्डित मानवता के विकास के द्योतक तुलसी !
त्यागी तपी मनस्वी महामुक्ति के गुम्फ साधक तुलसी !
जीवन की वाणी के एक अकम्प पावन पूरक तुलसी !
काम-प्रवर्तक नरता की सुचि मर्यादा के गायक तुलसी !
स्वीकारो इस क्षुद्र लेखनी का अपूर्ण तुलसा अभिवादन।



कोयल से

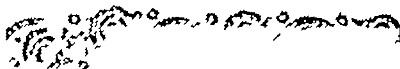
अमृत-मंत्र तेरी वाणी में कोयल ! जी भर बोल
स्वर की सरस माधुरी से प्राणों में नवरस घोल।

कितना तपकर पाई होगी ऐसी कला निराली
जिस पर न्योछावर जग-भर का सुर-कोष मतवाली !
कैसा सम्मोहन ! प्राणों में सात सिंधु उफनाए
नर्तित आरोहण अवरोहण पर भूगोल-खगोल।
अमृत-मंत्र तेरी वाणी में कोयल ! जी भर बोल।

तन काला है सोच रहा हूँ मन कितना सुन्दर है
जिसके तन्मय बोल कि पिघला पाहन का भी उर है
कौन विरह तप तपा मिली जो यह वाणी वरदानी
झूम रहे पल प्रपल स्वरों की लहरों का हिन्दोल।
अमृत-मंत्र तेरी वाणी में कोयल ! जी भर बोल।

युग-युग थके अथक तू लेकिन अविश्रम गाती जाती
कैसा निष्ठुर पिया न आया कब से उसे बुलाती
मैं हूँ एक कि दो पल मन को विरह-व्यथा के मारी
तेरे संयम में मैं अपनी रहा विकलता तोल।
अमृत-मंत्र तेरी वाणी में कोयल ! जी भर बोल।

बरसाती रह इन पीड़ित प्राणों पर मधु की धारा
भूला अपनी पीर सखी जो मैंने तुझे निहारा
मेरे विकल हृदय म फूटे निर्झर विश्वासों के
पिया-पिया स्वर-सुरा सहेली ! यह पाती अनमोल ।
अमृत-मन्त्र तेरी वाणी में कोयल ! जी भर बोल ।

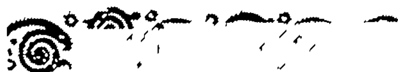


हरिजन-बाला

अभी सवेरा दूर, अँधेरा लेकिन हारा-हारा
गए सितारे डूब ज्योति का पहला मिला इशारा।
सारा जग सोया है इसने अभी न हलचल पाई,
कहीं-कहीं खग झाँक उठे नीड़ों से देख ललाई।
सब सोए हैं दूर झुग्गी में बुझी दीप की बाती
एक सहज अँगड़ाई लेती वह जागी मदमाती।
तन्द्रालस झपकों-से लोचन पलक नशीले भारी
नरम हथेली मींड उठी है चलने की तैयारी।
घुँघरी खुली लटें माथे पर उलझी-उलझी रेशी
नई टहनियों-सी उंगली से सुलझा उठी नवली।
श्याम रंग मेघों के रंग-सा माँग रेखती बिजली
इन्द्रधनुष की रेख बाँटती दो भागों में बदली।
गठे अंग श्रम के आदी-से मांसल गोरी काया
अभी फूटता आता यौवन सावन-सा सरसाया।
यौवन और रूप का ऐसा संगम कभी न देखा
आकर्षण की सीमा सम्मुख मधुराई का लेखा।
फटे वसन आधा तन ढाँके खुला हुआ तन आधा
निर्धनता के क्रूर पाश ने इसे जन्म से बाँधा।
एक हाथ में टसिया दूजा थामे हुए बुहारी
कटि में बँधा छोर लहँगे का श्रम की चली सवारी।

घर घर की गङ्गा बहाता चलो गंग की धारा
श्रद्धा से विभोर हो मैंने कितना उसे निहारा।
गली सड़क फुटपाथ आँगन घर घर झाड़ चली है
स्वास्थ्य और सुख का घर घर में झंडा गाड़ चली है।
सेवा इसका धर्म कर्म सेवा सेवा है वचन
बचपन से ही तपा कर्म की ज्वाला में यह जीवन।
यह संतोषी दो रोटी के टुकड़ों में मुसकाती
बाँट रही निर्मलता जग को बदले में क्या पाती ?
फटे वसन टूटी-सी कुटिया जीर्ण फूस का छप्पर,
घर घर जूठन पर इसके जीवन का क्रम है निर्भर।
यह उपेक्षिता ! फिर भी जीवन शाप नहीं कहती है
अच्छा-बुरा मिले जो कुछ भी उसमें खुश रहती है।
बड़े सवेरे से ही इसका जीवन क्रम चलता है
बड़ी रात तक इसको पल भर चैन नहीं मिलता है।
सबकी-सी साँसें हैं इसकी इन सबका-सा तन है
सबके-से अवयव हैं सबसे ज्यादा सुन्दर मन है।
सबकी-सी मद भरी उमंगें युवक-हृदय की चाहें
दुख-सुख आशा और निराशा मादक हँसी कराहें।
यह राधा भी अपने कान्हा के प्राणों की प्यारी
पलक-पाँवड़े बिछा देखती पथ यह भी सुकुमारी।
गली-गली इसका वृन्दावन कुआँ-कुआँ पनघट है
सब तरुवर तमाल-तरुवर हैं नाला यमुना-तट है।
यह समाज की चपल तितली नहीं प्यार की महिमा
यहाँ प्रदर्शन नहीं बनावट मूर्तिमान यह सुषमा।
फूल-फूल पर यह उड़ उड़ रस पीती नहीं ललचाती
एक फूल से प्यार उसी पर यह सर्वस्व लुटाती।
प्यार सीखना है तो कोई निर्मलता से सीखे
प्यार सीखना है तो कोई इस ललना से सीखे।

तीज और त्योहार सभी कुछ इस सरसा को भाते
नाच रहा यह प्राण कि इसके फूले नहीं समाते।
होरी कजरी सरस सावनी यह तन्मय गाती है
झूम-झूम झूले पर पगी मती मदमाती है।
खुली हवा मे इसने समरसता से जीना सीखा
सघर्षों का गरल सुधा सम इसने पीना सीखा।
यह अस्पृश्य उपेक्षित इसको सबकी घृणा मिली है
इसे देखकर लेकिन कवि के मन की कली खिली है।
कीचड़ में हो पर हीरे की आब नहीं जाती है
मेरी करुण भावना तेरे सग बही जाती है।
श्रम से पावन सेवा से महान क्या है जीवन मे ?
तूने जो कुछ दिया मिलेगा दुनिया को किस धन में?
तेरी पूजा श्रम की पूजा करता हूँ अभिनन्दन
ओ साकार तपस्या! तुमने बाँध लिया कवि का मन।



गीत

हर मुश्किल आसान हो गई,
तुमसे जो पहचान हो गई।

बीत गए जैसे सब दुर्दिन
नये नये से लगते पल छिन
अन्तर की करुणा धारा ही
प्रीति पगी मुसकान हो गई।
हर मुश्किल आसान हो गई,
तुमसे जो पहचान हो गई।

सरिता को सागर का संबल
कलियों का यौवन है अलि दल
मिला गगन को जब क्षिति का बल
सब संसृति गतिमान हो गई।
हर मुश्किल आसान हो गई,
तुमसे जो पहचान हो गई।

बिना प्यार तो हृदय अधूरा
चांद कहाँ राका बिन पूरा

प्राण बिना विधवा है काया
जीवन निशा बिहान हो गई।
हर मुश्किल आसान हो गई,
तुमसे जो पहचान हो गई।

ज्योति नयन पग ने गति पाई
साहस में आँधी तरुणाई,
निश्चय का दूना सा परिश्रम
प्रीति मुझे वरदान हो गई।
हर मुश्किल आसान हो गई,
तुमसे जो पहचान हो गई।

आज बहुत गाने का मन है

मेघों के घट सिर पर धरकर,
यह बरखा गूजरिया आई
अलियों पर बरसा संजीवन
कलियों पर बरसी तरुणाई
वेणी खोल केश बिखराए,
बिजली की मुसकान सँवारे
तन ही क्या मन भीगा मेरा
यह कैसी गागर छलकाई?
बौराया भ्रम्मर दीवाना
मतवाला आँगन आँगन है।
आज बहुत गाने का मन है।

छेड़ रही कोयलिया मन की—
बीणा के सोए तारों को
'पिया पिया' दे रहा पपीहा
और अजानी झनकारों को
बूँद बूँद तृष्णा बन बरसी
बोल उठी गूँगी आकुलता
हवा लपट दे रही बावली—
सुधियों के इन अंगारों को

तुमसे दूर न रिमझिम रिमझिम
तुमसे दूर कहाँ सावन है?
आज बहुत गाने का मन है।

दूर दूर तक हरियाली के
चंचल सागर लहराते हैं
वल्लरियाँ ऊपर उठती हैं
तरुवर नीचे झुक आते हैं
मन भर भर आता है मेरा
शब्द नहीं कह पाते जिसको
मुक्त पवन पर पंख खोलकर,
यही चाह पंछी गाते हैं,
जो उमंग सरिता की धुन है
जो उमंग सागर का मन है।
आज बहुत गाने का मन है।

आओ बाँह छुड़ाकर बैठें
आओ इन झड़ियों को झेलें
आओ मिलकर पग बढ़ाएँ,
आओ इन लहरों से खेलें
तुम वेणी बनकर इठलाओ
मैं पी पी की टेर लगाऊँ
जीवन गाते गाते बीते
वह उमंग धरती से ले लें
गाओ तो जीवन यौवन है
गा न सको तो यम रोदन है।
आज बहुत गाने का मन है।

शरद् के चाँद से

ओ शरद् के चाँद!
तुम-से रूपवाला चाँद मेरे पास भी है।

एक दिन तकदीर बदली है तुम्हारी
तुम कलंकी निष्कलंकी हो सके हो
कौन संचित पुण्य के बल पर न जानें
एक दिन को यह कलुष तुम धो सके हो
और मेरा चाँद! इसके दिन सुनहले
हर निशा है पूनमी शृंगारवाली
तुम कहाँ इस पर तुलोगे? विश्व भर के—
रूप का अपवाद मेरे पास भी है।
ओ शरद् के चाँद!
तुम-से रूपवाला चाँद मेरे पास भी है।

तुम कि जो अभिमान के आकाश पर बैठे
धरा के सागरों को छल रहे हो
भूल मत जाओ उजाले की डगर से
तुम अमावस के नगर को चल रहे हो
और मेरा चाँद! इसके लोचनों की—
कोर में बन्दी बनी बैठी अमावस

क्या कहूँ तुमसे तुम्हारी चाँदनी से
सौ गुना उन्माद मेरे पास भी है।

ओ शरद् के चाँद!
तुम-से रूपवाला चाँद मेरे पास भी है।

तुम कहोगे चाँद मेरा भी कभी तो
काल के विकराल हाथों से छलेगा!
और तब मेरे लुटे उजड़े हृदय को
दर्द हाहाकार तुम जैसा मिलेगा!
पर सुनो मेरी कला इस चाँदनी को
रूप यौवन की अमरता दे चुकी है
काल के कर, सी न पाएँगे अधर जिसके
अनश्वर नाद मेरे पास भी है।

ओ शरद् के चाँद!
तुम-से रूपवाला चाँद मेरे पास भी है।



उपालम्भ

ऐसे गरज रहे हो बादल ! जैसे भरे हुए हो
मुझे ज्ञात है सिर पर गागर खाली भरे हुए हो।

पानी हो तुममें तो बरसो ! प्राण चले जाते हैं
भरे हुए तो नहीं याचना ऐसे ठुकराते हैं
और अगर जलधर भी हो तो यह इतराना कैसा !
मेरे सागर से चेतनता लेकर हरे हुए हो।
ऐसे गरज रहे हो बादल ! जैसे भरे हुए हो
मुझे ज्ञात है सिर पर गागर खाली भरे हुए हो।

या फिर बड़े कृपण हो वारिद ! तुम ओछे हो मन के
सिंधु सहेजे बैठे छींटे दे न रहे जलकण के।
मैं भी देखूँ छोटी गागर कितनी भर सकते हो
देखोगे पतझर के तरु-सा तुम भी झरे हुए हो।
ऐसे गरज रहे हो बादल ! जैसे भरे हुए हो
मुझे ज्ञात है सिर पर गागर खाली भरे हुए हो।

जग की रीति यही है कोई याचक कोई दानी
तुम देते हो हम पाते हैं अपनी यही कहानी

भक्त न होता तो पूजा का पत्थर पत्थर होता
तुम तारोगे मुझे ? अभी तो मुझमें तरे हुए हो।
ऐसे गम्भ रहे हो शान्त। जैसे भरे हुए हो,
मुझे ज्ञात है सिर पर गागर खाली धरे हुए हो।

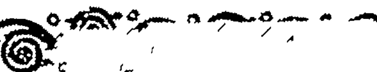
गीत

पहले ही पीड़ा क्या कम थी
जो सुधि की यह पीर दे गए!

वंचित रहा सदा मैं सुख से
मेरे प्राण बहुत उन्मन थे
आँसू थे श्वासा थी गम था
दुनिया के सौ भी बंधन थे
मुक्त नहीं था मैं तब भी तो
एक नई जंजीर दे गए।
पहले ही पीड़ा क्या कम थी
जो सुधि की यह पीर दे गए!

तब दुख में मुसकाता तो था
वह भी बात नहीं रहने दी
तब मन ही मन रो लेता था
वह अरमान नहीं रहने दी
धीर बहुत कमजोर बाँध है
क्यों तुम इतना नीर दे गए?
पहले ही पीड़ा क्या कम थी
जो यह सुधि की पीर दे गए!

अब कोई अवलंब नहीं था
एक मुझे तुम मिले सहारा
मैंने समझा मेरी निर्बल तरी—
पा गई आज किनारा
मधुर स्वप्न-से आए, लौटे
मुझे विरह का पीर दे गए।
पहले ही पीड़ा क्या कम थी
जो यह सुधि की पीर दे गए।



गीत

तुम बिन मेरे नीरव मन में
कौन भरेगा कहो उजाला?

आँखों में सावन के घन हैं,
प्राणों में पीड़ा मतवाली
काली निशा रही मेरे घर,
कभी नहीं आई दीवाली
एक किरण से तुम आए थे
सो भी रूठे बिछुड़ गए हो
अधर छू सके थे बस प्याला
तोड़ दिया यह क्या कर डाला?
तुम बिन मेरे नीरव मन में
कौन भरेगा कहो उजाला?

खोकर तुम्हें कहूँ क्या? मेरे—
जीवन में अब शेष रहा क्या?
सारे फूल चुन लिए, बोलो
मधुवन में अब शेष रहा क्या?
काँटे बचे सहेजे हूँ मैं
जो तुम दो स्वीकार करूँगा।

तुम न बुझाना तो न बुझो
मेरे विकल हृदय की ज्वाला।
तुम बिन मेरे नीरव मन में
कौन भरेगा कहो उजाला?

मेरे प्यासे प्राण एक बस
तेरी राह निहारा करते
सपनों के बीच प्यार के—
वट की छाँह निहारा करते
गीतों की तूलिका लिए मन
तेरे चित्र बनाया करता
लगन पिरोती रहती निशि दिन
आँसू से पूजा की माला।
तुम बिन मेरे नीरव मन में
कौन भरेगा कहो उजाला?



गीत

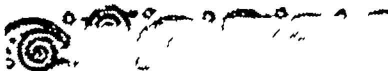
तुम-सा पारस प्राण परस ले
यह माटी कंचन बन जाए।

यह बगिया जिसके फूलों ने
पल भर कभी बहार न देखी
डालों ने शृंगार न देखा
पातों ने जल-धार न देखी
जिसकी कोयल कूक न पाई,
सूनी रही सदा अमराई,
तुम घन घटा! निमिष-भर बरसो
यह निर्जन नन्दन बन जाए।
तुम-सा पारस प्राण परस ले
यह माटी कंचन बन जाए।

जग के नाग-पाश में जकड़ी
घुटी जा रही मेरी काया
प्राणों पर पीड़ा का तम है
कोई सपना निखर न पाया
ऐसे ही विफल साधों का—
जीवन क्षार हुआ जाता है

ममता की किरनें दे जाओ
मुझे मुक्ति बंधन बन जाए।
तुम-सा पारस प्राण परस से
यह माटी कंचन बन जाए।

कब तक और रहे धुँधुआती
स्नेह बिना दीपक की बाती
तुम अवलंब कहीं बन जाते
यह आँधी से आँख मिलाती
सूनी रात अँधेरा गहरा
जीवन पर मावस का पहरा
तुम-सी स्वर्ण-किरण मुसकाए
यह मधुबन मदन बन जाए।
तुम-सा पारस प्राण परस से
यह माटी कंचन बन जाए।



गीत

फिर छेड़ो मन की वीणा के—
ये अलसाए तार सलोनी!

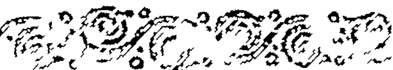
ये देखो सावन के बादल
यह देखो चपला मतवाली
ये रिमझिम बूँदों की झड़ियाँ
यह कूकी कोयलिया काली
दूर कहीं 'पी पी' की धुन में
प्राणों का शृंगार उतरता
मेरे ही उर पर पाहन सा
क्यों यह सुधि का भार सलोनी?
फिर छेड़ो मन की वीणा के—
ये अलसाए तार सलोनी!

देख रहा डालों पर झूले
झूलों में यौवन के झोंके
आँखों में गीतों का मेला
रोके कोई इनको रोके
सारा जग डूबा सावन में
मैं विरही आहों में डूबा

ये आँसू ये सुधियाँ पीड़ा
बस मेरा संसार सलोनी!
फिर छेड़ो मन की वीणा के—
ये अलसाए तार सलोनी!

यह सावन सावन था मुझ पर
अलकों की बिखरी घन माला
नयनों के प्यालों से छल छल
कितनी ढली प्रणय की हाला
ये झड़ियाँ वह झूला झोंके
वह मादक मुसकी बिजली सी
ये सूनी सूनी रँगरलियाँ
बिरहिन मेघ मल्हार सलोनी!
फिर छेड़ो मन की वीणा के—
ये अलसाए तार सलोनी!

वे कोयल के प्रणय संदेशे
सुन सुनकर तेरा सकुचाता
लाज भरी पलकों का झुकना
चितवन का बागी हो जाना
वह प्यासे नयनों की लाली
वे उमगी प्राणों की साधें
और कहूँ क्या तुमसे? मुझको
मातम यह त्योहार सलोनी!
फिर छेड़ो मन की वीणा के—
ये अलसाए तार सलोनी!



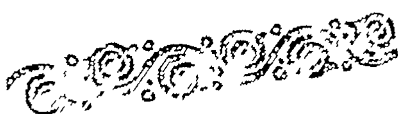
गीत

सिंधु के सौ ज्वार अन्तर में लगे लेने हिलोरें
चाँद छाती से लगाने आज मेरे प्राण मचले।

आज तक निर्जीव थी जो उन लहरियों में जवानी
आज बानी बन गई जो घुट रही अब तक कहानी
हर लहर में एक बिजली हर लहर में एक आँधी
नभ धरा पर खींच लाने आज मेरे प्राण मचले।
सिंधु के सौ ज्वार अन्तर में लगे लेने हिलोरें,
चाँद छाती से लगाने आज मेरे प्राण मचले।

राह में इतने प्रभंजन थे कि जी भर जल न पाया
आँधियों ने दीन बाती को बहुत अब तक सताया
इस पराजित वर्तिका को प्यार का संबल मिला है,
सुन कि दीवाली मनाने आज मेरे प्राण मचले।
सिंधु के सौ ज्वार अन्तर में लगे लेने हिलोरें
चाँद छाती से लगाने आज मेरे प्राण मचले।

चाँद! मेरे सामने तुम आज साधों की विजय है
साधना पूरी हुई, वरदान मिलने का समय है
लग रहा है व्योम की निस्सीमता भर लूँ भुजा में
हो गया है क्या न जाने! आज मेरे प्राण मचले।
सिंधु के सौ ज्वार अन्तर में लगे लेने हिलोरें,
चाँद छाती से लगाने आज मेरे प्राण मचले।



एक शरद्-निशा

यह शरद् की रात भी कितनी सुहानी है!
और मेरी आँख में दो बूँद पानी है।
यह घड़ी! फिर लोचनों में नीर आया है!
लग रहा जैसे मुझे तुमने बुलाया है।
चाँदनी ऐसी वहाँ भी छा गई होगी
और मेरी याद तुमको आ गई होगी।
मैं यहाँ हूँ तुम वहाँ हो द्रुम भरे होंगे
घाव मन के हो गए ज्यादा हरे होंगे।
प्राण में उमगी अनोखी सुगबुगी होगी
तब बतानी बोझ सी तुमको लगी होगी।
चौंक तारा और तुमने खूब देखा है,
खिंच गई आकाश पर यह ज्योति रेखा है।
सोचती होगी हमारे बीच दूरी है
यह शरद् की रात भी कितनी अधूरी है!
और तुमको याद वे दिन आ गए होंगे
कोयलें कू-कू पपीहे गा गए होंगे।
चाँद ऐसा ही सलोनी चाँदनी ऐसी
होश में आती हवा उन्मादिनी ऐसी।
यामिनी थी प्यार था उन्माद था हम थे
खो गए जाने कहाँ संसार के गम थे।

साथ भुजबंधन हमारे तोड़ देती थी
और नीरवता उन्हें फिर जोड़ देती थी।
वह समाँ वह रंग वह रस आज सपना है,
उम्र भर संगी! हमें ऐसे कलपना है।
वह निशा अब रह गई केवल कहानी है,
प्यार की संसार ने कीमत न जानी है।
यह शरद् की रात भी कितनी सुहानी है!
और मेरी आँख में दो बूँद पानी है।

तुम

फूटी पौ किरण दल कि जैसे गगन की—
नसों में लगी दौड़ने रक्त धारा
अँधेरा घुला जागरण की घड़ी है
नई चेतना ने जगत् को सँवारा।

उधर व्योम की पास-उषा मसल की—
कुसुम सेज से जागकर मुस्कराई।
इधर यह उषा ममता से रही है
निशा के उतरते नशे की जम्हाई।

छूटे श्याम कुंचित मसृण कुन्तलों को
किरण उँगलियों से हटाया गया है।
कि जगे जगत् का गहन तम प्रभा के—
सुकोमल करों से मिटाया गया है।

नयन दो मधुर प्यालियों में कि जैसे
गगन का निचोड़ा गया रंग नीला।
नयन दो गुरा रूप छम छम छलकते
पिए जा रहा है हृदय मंत्र कीला।

चपल पुतलियाँ दो कि दो नील नीलम
किसी स्वर्ण के आभरण में कसे हैं।
चपल पुतलियाँ दो कि दो बाल भौंरे
किसी फूल की गोद में आ बसे हैं।

अधर पर हँसी इन्द्रधनुषी विवर से
सुधा की बही फूटकर तेज धारा।
अधर पर हँसी ज्यों किसी नवकली को
किसी भृंग का मिल गया हो इशारा।

लगा ज्यों सवेरे सवेरे सलोना
किसी रूप सर में कमल खिल गया हो।
भ्रमर, मुग्ध मन चल दिया दौड़ चचल
बड़ी साध थी आज धन मिल गया हो।

तुम्हें देखकर यों लगा ज्यों युगों की—
सिमट एक पल में मधुर साध आई।
तुम्हें देखकर यह लगा क्योंकि सुषमा
स्वयं देह धर सामने जगमगाई।

तुम्हें छू लिया तो लगा उँगलियों ने
विकल बिजलियों का वदन छू लिया हो।
मके प्राण ने चेतना बाँध ली हो
धरा के विहग ने गगन छू लिया हो।

कहूँ और क्या? प्राणधन! यह मिलन क्षण
मुझे जिंदगी की लगन बन गया है।
अँधेरी दिशा को किरण बन गया है
निशा को सुबह की शरण बन गया है।

असम्बल हृदय को मिली धारणा है
कि अब जिन्दगी बेसहारा नहीं है।
तुम्हें जो न समझूँ किनारा सहेली!
जगत् में बना ही किनारा नहीं है।



होली के दिन

ढोलक पर बैठी थाप चंग में रस के बोल गहे
अब न रहा जाएगा तुमसे मन की बिना कहे।

बरस बरस की ये दो घड़ियाँ रंगोंवाली होली
फूलों के शर मारे कोयल की मनब्याही बोली।

दुनिया भर से बाहर निकली तुम भी बाहर आओ
अंगों पर झेलो पिचकारी प्राणों तक रँग जाओ।

रस में डूबो आज लाज को पलकों में पी लो
प्यासे अधर कमल बन जाएँ, कुछ यों भी जी लो।

उर का रीता घट कुमार के पनघट पर भर लो
सबकी कही बहुत की कुछ तो मन की भी कर लो।

फागुन का मौसम बयार से बढ़कर बात करो
फूलों के रिसते खुमार से बढ़कर बात करो।

घर में बैठो मत गुलाब की महक बुलाती है
इसके तन से आज प्यार की खुशबू आती है।

जुही चमेली हरसिंगार की कलियों को छू लो
मंजरियाँ में बौरों पत्तों पर झूमा झूमो।

वे टसू जो अंगारों की तरह दहकते हैं
चिनगी चिनगी में उमंग के सोते बहते हैं।

चलो हरे चम्पे से मन की मदिरा ले आएँ,
सरसों के सागर में जी भर डूबें उतराएँ।

आज बहुत मन है कि पपीहे की बोली बोलें
बातों बातों खेल खेल मन के बंधन खोलें।

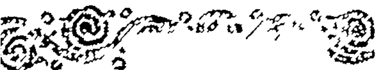
दूर नहीं वे जो दीवाने फागुन गाते हैं
रंगा गीतों में प्राणों की तपन बुझाते हैं।

मैं भी इस दुनिया के हाथों बहुत सताया हूँ
होली के दिन आज तुम्हारे द्वारे आया हूँ।

मैंने कितने हाथों अब तक देह रँगाई है
लेकिन कोई बूँद प्राण तक पहुँच न पाई है।

इस गुलाल में मेरे मन की गंध न मिलती है
यह रंगीनी परम प्यार का पाकर खिलती है।

इस उमंग में प्राणों की लाली घुल जाने दो
जीवन को दुग्ध सुख की डोली पर तुम जाने दो।



गीत

बरसी रिमझिम रस धार प्राण मचले मचले
जागा है सोया प्यार प्राण मचले मचले।
साँवली घटाओं में नभ का आँगन भरा
रस भरी हवाओं ने डाला मन में डेरा
आवाज दे रही है किसको बिजली रानी?
करके सोलह सिंगार प्राण मचले मचले।
बरसी रिमझिम रस धार प्राण मचले मचले
जागा है सोया प्यार प्राण मचले मचले।
झर गए कौन मोती सीपम की प्याली से!
कैसा जादू पट गई धरा हरियाली से
यह इन्द्रधनुष ये मेघ रूप की यह माया
सावन का यह संसार, प्राण मचले - मचले।
बरसी रिमझिम रस धार, प्राण मचले मचले
जागा है सोया प्यार प्राण मचले मचले।
ऐसे में मान किसी का किसको खल नहीं
दो दिन की यह बरसात हारकर ढले नहीं
ये बादल बिजली झड़ी व्यर्थ जो तुम न मिले
खुल गए हृदय के द्वार प्राण मचले मचले।
बरसी रिमझिम रस धार प्राण मचले मचले
जागा है सोया प्यार प्राण मचले मचले।

गीत

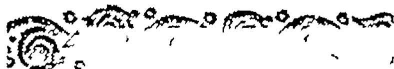
एक आसरा मुझको अपनी आहों का
और दूसरा तेरी चंचल बाँहों का।

जग ने इतना दाह दिया कोमल मन को
मेरी कमजोरी से पहले मिला नहीं
तब तक मैं आमूल अश्रु में डूबा था
जब तक तेरा मुझे सहारा मिला नहीं
पर, अब तो अपनी पीड़ा से प्यार मुझे
तेरी करुणा इस पर छाँह किए बैठी
तूने जो अपने आँचल से सोख लिए,
कारण है मुझ पर उन बदनाम प्रवाहों का।
एक आसरा मुझको अपनी आहों का
और दूसरा तेरी चंचल बाँहों का।

मैंने कभी नहीं चाहा यह जीवन में
दुनिया में मेरे गीतों की कीमत हो
तुमने अपना लिया इन्हें इतना काफी
अथवा मेरी मस्ती पर कोई मत हो।
अब तो कुछ ऐसा लगता मन को जैसे
तुम्हें याद करना हमारी मजबूरी है

भय भी लगता है कि कभी तुम बिछुड़ गए,
क्या होगा इसकी दीवानी चाहों का ?
एक आसरा मुझको अपनी आहों का
और दूसरा तेरी चपल बाँहों का।

दर्द दाह ने मुझको जीना सिखलाया
तुमने सुगम किया है कंटक पथ मेरा
दोनों का अहसान बहुत मेरे सिर पर
मंजिल तक पहुँचेगा जीवन रथ मेरा
तुमने प्रेरित किया मुझे मैं चलूँ चलूँ
एकाकी सम्भव था हार गया होता !
संघर्षों में प्यार साथ हो जाए तो
पग दो पग होता है योजन राहों का।
एक आसरा मुझको अपनी आहों का
और दूसरा तेरी चपल बाँहों का।



गीत

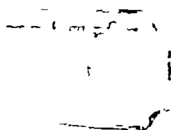
ये प्रतीक्षा के युगों-से पल नहीं भाते मुझे।

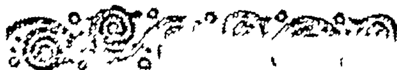
मिल गई है रात को वरदान-सी यह चाँदनी
एक मेरा घर उजाले के नयन भूले हुए,
एक मेरे प्राण की पूनम अमावस पी गई,
चाँद के वन्दन चरण मेरा गगन भूले हुए,
उम्र-सी लम्बी निशा प्यासी दिशा बेचैन मन
जागरण के स्वप्न कितना दाह दे जाते मुझे!
ये प्रतीक्षा के युगों-से पल नहीं भाते मुझे।

क्या कहूँ उसकी व्यथा तकदीर जिसके साथ हो?
रात बीते पर सवेरे की किरण झाँके नहीं
फूल-कलियों पर उदासी की घटा छाई रहे
धूप दुनिया पर खिले मेरा चमन झाँके नहीं
कौन यह दुर्भाग्य पहरा दे रहा मेरी गली में?
कौन ये अभिशाप? क्यों दिन रात कलपाते मुझे?
ये प्रतीक्षा के युगों-से पल नहीं भाते मुझे।

जानता हूँ मैं कि मेरी ही तरह लाचार तुम भी
ये प्रतीक्षा के युगों-से पल तुम्हारे साथ भी हैं

यह अँधेरी रात यह सूनी डगर धुँधली दिशाएँ,
यह कसक यह दर्द की हलचल तुम्हारे साथ भी है,
मौन तुम सह लो घटाओं से चुरा लो आँख चाहे
वापसे बादल तुम्हारे द्वार से आते मुझे।
ये प्रतीक्षा के युगों-से पल नहीं भाते मुझे।





गीत

आज न टोको हाथ न रोको जी भर पी लेने दो साकी !

जीवन संघर्षों ने मेरा दीवानापन छीन लिया है
वह भावुक मन छीन लिया है वह मन का धन छीन लिया है
इन्द्रधनुष के जिन रंगों से मैं जीवन के चित्र बनाता
वह घर आँगन छीन लिया है रसवाला धन छीन लिया है
भरा नहीं जो वह क्या छलके ? घट भर भी लेने दो साकी !
आज न टोको हाथ न रोको जी भर पी लेने दो साकी !

वह मस्ती कैसी मस्ती थी मैं जिसमें डूबा गाता था
तुम प्याला भर भर लाते थे मैं खाली करता जाता था
प्यास नहीं थक पाती मेरी हाथ नहीं रुक पाते तेरे,
हम मद होश बहे जाते थे सुख का सागर लहराता था
जीने को तो मैं जीता हूँ लेकिन जैसे पायस पानी।
आज न टोको हाथ न रोको जी भर पी लेने दो साकी !

आज बहुत दिन बाद तुम्हारे दरवाजे तक आ पाया हूँ
देखो कितनी प्यास प्राण के घट में संचित कर लाया हूँ
और आज ये बिछुड़े आनें मिल पाएँ, फिर भी न सकें हम !
मैं एकाकी यह लम्बा पथ पग डगमग हैं घबराया हूँ
हो जितनी वारुणी पिला दो बूँद नहीं रह सका बाकी।
आज न टोको हाथ न रोको जी भर पी लेने दो साकी !

यह मदिरा अनमोल प्यार की पी जिसने वह पार हो गया
पी न सका जो कण भी उसको यह जग-जीवन भार हो गया
यह मदिरा पीकर कलियों में वे देखो भौंरे जीते हैं,
मैं जीवित हूँ पर जीवन्मृत यह मेरा संसार खो गया
फिर जी लूँ मैं फिर पी लूँ मैं फिर सज ले जीवन की झाँकी।
प्यास न टोको हाथ न रोको जी भर पी लेने दो साकी।

गीत

सौरभ के कोप खुले फूल फूल खुल रोना
गाने लाचार हुआ मन पंछी अलबेला
सौरभ के कोप खुले।

यादों के स्रोत जगे सुधिया की मीड़ लगी
प्राणों का धीर गया
इन्द्रधनुष पर घरबर पाम हीर कौन ढीठ!
मेरा मन धीर गया
पंचम धम मधस हुए, री! बरखा की बेला।
गाने लाचार हुआ मन पंछी अलबेला।
सौरभ के कोप खुले।

पायलिया बोल रही रंग के पट खोल रही
प्राण धीर थाम रही
पूनी अमराई में मेह भरी दीवानी
डाल डाल नाच रही
मैं ठगा मगार भी उजड़ गया दूर मेला।
गाने लाचार हुआ मन पंछी अलबेला।
सौरभ के कोप खुले।

मैं उदास क्या गाऊँ? कोयल के मधुर गीत?
बिजली की केलि कला?
कल के न झरे फूल? वृन्त वृन्त पाकि मूल?
धार मिली तट न मिला।
मैं उदास दो क्षण का जीवन का यह रेला।
गाने साभार हुआ मन पंछी अलबेला।
सौरभ के कोष खुले।

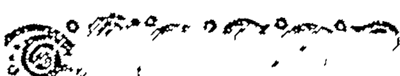
गीत

अब न आऊँगा तुम्हारे द्वार, यह अंतिम चरण है।

भूल आँखों की हृदय को दे गई थी रात काली
हाय री छलना! अमावस को समझ बैठे दिवाली
तुम मरुस्थल की घटा छल की कथा भ्रम की कहानी
तृप्ति तुमसे माँगने दौड़ी तृषा मेरी दिवानी
लौट आई हार बारम्बार, यह अंतिम चरण है।
अब न आऊँगा तुम्हारे द्वार, यह अंतिम चरण है।

क्या कहूँ संसार का दस्तूर ही है यह पुराना
आग देना जानता है, पर, नहीं सीखा बुझाना
सिन्धु से कितना कहा 'रुक जा अभागे! पा सकेगा?
चाँद पत्थर है, इसे मनुहार से पिघला सकेगा?
टूटने दे स्वप्न है संसार यह अंतिम चरण है।
अब न आऊँगा तुम्हारे द्वार, यह अंतिम चरण है।

आज बुझता नहीं जिसने तुम्हें फिर फिर पुकारा
पा लिया मेरे हृदय ने आँख से ओझल सितारा
बन्द रखना द्वार, अपनी अब नहीं देगी सुनाई
मानिनी! मंज़िल मुझे दे दी तुम्हें मेरी बधाई
आज अंतिम बार मेरा प्यार यह अंतिम चरण है।
अब न आऊँगा तुम्हारे द्वार यह अंतिम चरण है।



नारी

कितने चित्र बने बन बनकर बिगड़े होंगे
कितनी प्रतिमाओं के रूप सँवारे होंगे
बार बार तुमको रचने की कोशिश होगी
जाने कब तक राई नौन उतारे होंगे!

कितनी जिज्ञासा आशा अभिलाषा लेकर,
युग युग तक साधना कला की रही तपाती
और एक दिन जब तुम पहली बार हँसी थीं
फूल गई होगी ब्रह्मा की सुख से छाती।

फूलों ने तुमसे मुसकाना सीखा होगा
श्याम घटाओं ने लहरे केशों से घुमड़न
तुम आईं जैसे जगमग सी धू धू जलती
धरती पर उतरी गंगा की धारा पावन।

रीझ गया सौन्दर्य स्वयं देखा जो तुमको
कोमलता ने अंग अंग छू लिए सहेली!
हारे ध्यान कला ज्ञान विज्ञान धर्म तप
तुम न सुलझ पाइ पर, कैसी गूढ़ पहेली!

मादक हो पूर्णिमा नहीं है इतनी मादक
शीतल हो शशि ! भोर नहीं है इतनी शीतल
दाग चाँद में तुम परिपूर्ण रूप ही जैसे
उपमा कहाँ जिसे बतला दूँ तुमसे उज्ज्वल ।

नयना दो दो सागर भरे सुरा के मानो
नीले गहरे हृदय डूबकर उबर न पाता
बोझिल पलक पुतलियाँ ढाँके मुँदते खुलते
जैसे कोई कमल सिहर बाँहें फैलाता ।

केश पाश छहरे सावन के मेघ सलोने
कनक-कपोल सजाई ऊषा विस्मित अपलक
हँसी एक पल जैसे बीहड़ तममय वन में
हँसी हजारों एकसाथ बिजलियाँ अचानक ।

रजनीगंधा की फूली टहनी सी काया
अंग अंग नभ गंगा की लहरों सा चंचल
छू दो तुम चट्टानों में सिहरन भर जाए,
शिखर देश सा खिल जाएँ दल के दल पाटल ।

आई लाज साज को देख सजाना तेरा
स्वर मधुमयता को मानो माधुरी मिल गई,
निखिल चेतना ही जैसे प्रिय ! मूर्त रूप धर,
धरती पर उतरी जड़ता की नींव हिल गई ।

हार रही कल्पना लगानी बौराई सी
थके शब्द कठिन अभिव्यंजन की क्षमता
सात सुहाग की लाली छीन मृत्यु से भी
इतिहास न बतला पाएगा इसकी समता ।

साहस मशिकता स्वयं अग्नि हो गई राग
हिम की धाराएँ सती ! तुम्हें न गला पाईं,
मड़ गई जहाँ झुक गई हिमालय की दृढ़ता
हँसकर पी गए गरल तुमने ली अँगड़ाई।

साम्राज्य चरण चूमते मुकुट झुक गए त्रस्त
अभिमानी तलवारों का सूख गया पानी
चितवन-शर एक पाकर भी भीषणतम बर्बरता
दाँतों में तृण दाब बढ़ा करते अगवानी।

त्याग मोह प्राणों से बढ़कर किस पर होगा ?
एक नहीं दो नहीं अपितु सोलह सहस्र थी
महाकाल के प्रलयंकारी हवनकुण्ड में—
गिरनेवाली सोहू की धारा अजस्र थी।

रोली नहीं पोंछने दी तुमने मस्तक से
जला दिया कोमल कलियों-सा मादक यौवन
लाल लाल लपटों में धू धू अनल आग में
हँस हँस कूदीं और न था अधरों पर रोदन।

माँ हो तुम नतमस्तक हूँ असीम श्रद्धा से
तुमसे मुझे मिली है जो कण-भर भी ममता
अलका का साम्राज्य विश्व भर का सुख-वैभव
नहीं मानता कर पाए इस धन की समता।

मेरा जीवन शिशु तेरी गोदी में खेला
मैं तेरी भावना रूप धर आई भरा
तेरे सारे स्वप्न बन गए काया मेरी
हृदय बना बढ़ा छाती में चिन्तन तेरा।

साधे हुए दीप पर जब तक सरा तर कर
भृगों से टकरा जाने में मुझे नहीं भय
जीवन की यह ज्योति एक पल जल न सकेगी
जो न मिले तेरे दुलार का पावन प्रश्रय।

बहना हो यह प्यार सूत के कच्चे धागे
द्वेष घृणा आडम्बर की दुनिया से ऊपर,
सारे जग विभेद दूर कर बँध जाते हैं
पौरुष की प्रेरणा बने मन की गति सुन्दर।

तुम खेली साकार प्रकृति भू के आँगन में
मुग्ध हुए हम सुन तेरी तुतलाती बोली
पवन भिखारी बनकर सुरभि माँगने आया
यौवन मन्दिर में भीगी वेणी जब खोली।

और कहाँ तक कहें तुम्हारा गौरव पावन
जिसे स्नेह दो तुम वह तुलसी बन जाता है
अंगारा हो और तुम्हें छूकर जल जाना
जाने क्यों इन पागल प्राणों को भाता है!

कल्याणी! सौन्दर्य गर्व करता है तुम पर
क्यों कृत्रिमता? रंग अधर यह क्षुद्र प्रसाधन!
स्वाभाविक अरुणिमा कपोलों की अधरों की
लाल अरुण में अधिक निरख आकर्षक शोभन।

सीख न जाए पावनता नारीत्व तुम्हारा
छा न जाय अभी गर्ज पथ में दीन गरजना
[illegible] न [illegible] सपना न ज्वाला उगला
हार हो सब द्वेष घृणा जीवनमय करुणा।

तुम प्रारब्ध बदल सकती हो मानवता का
एक बार जो ललकारो झाँसी की रानी !
क्या नर? पशु? भरकर सकरुण ममता जो दृग में
देखो तुम जड़ पत्थर तक हो जाए पानी।

युग बीता नवयुग का नूतन अरुण सवेरा
झाँक रहा है नई रश्मियाँ मचल रही हैं
बीत गए दिन परवशता के उत्पीड़न के
देख रहा हूँ मेरी दुनिया बदल रही है।

तुम मेरी गति बनो तुम्हारा मैं सरक्षण
तुम मेरी रागिनी बीन मैं बनूँ तुम्हारी
गूँज उठे मधुर प्राण से जीवन सरगम
हम दोनों मिल बन जाएँ जग की उजियारी।

तुम पर अवलम्बित भावी जीवन तरिणी का
तुम पतवार पुरुष के कर डाँड़ों पर चलते
वह ममता भाथी तुम बनी स्नेह की धारा
इसी समन्वय की गरिमा के दीपक जलते।

जिनका चिरआलोक बिखर जाता मग-जग में
छा जाया करती दोनों के तप की लाली
देवि ! तभी पतझर से मुरझाई धरती पर—
खिलती है नवभोर सुनहल फूलोंवाली।

चिर तप वर्मी तुम पुरुष हिम-शिला बनकर गलता
धरा उर्वरा बनती इस निर्झर के जल से
सावन सी संसृति पट जाती हरियाली से
उठ आते ऊपर मोती सागर के तल से।

जग मा प्रीति प्रदीप दिए जाओ चिरसंगिनि !

मैं मशाल लेकर चलता हूँ साथ तुम्हारे,

मानवता की ज्योति न बुझने पाए पल भर,

अट्टहास कर अब न टूट पाएँ अँधियारे।

गीत

सबको हँसी सुहाई मेरी मन की पीर न जाना कोई।

जग ने देखा कवि गाता है दुनिया का मन बहलाता है,
कितनी खुशी मिली है इसको यह सुख में डूबा जाता है,
पर, जग को मुसकाने दे जो उसने खुद आँसू पाए हैं,
सो हृदय को मरघट समझा चुभते तीर न जाना कोई।
सबको हँसी सुहाई मेरी मन की पीर न जाना कोई।

हर हारे मन का सम्बल जो हर सूखे मन का पावस है
हर अँधियारे घर दीपक जो हर वीराने की हलचल है
वह कितना सूना सूना है, पल पल दुख दूना दूना है
जग को मुक्ति दान दे उसके पग जंजीर न जाना कोई।
सबको हँसी सुहाई मेरी मन की पीर न जाना कोई।

मुसकाया तो निशा हँसी है हर मुरझाई कली खिली है,
साँस साँस था उठी प्रभाती जड़ता को चेतना मिली है
पाहन तक में प्राण भरे जो दुनिया की तकदीर जगाए,
उस कवि से भी सदा रूठी रूठी तकदीर न जाना कोई।
सबको हँसी सुहाई मेरी मन की पीर न जाना कोई।

तानसेन के प्रति

स्वर के राजा ! तुमने वाणी में कैसी शक्ति जगाई थी
सुनकर पपीहरे मुटे मुटे कोयल बैठी शरमाई थी।
संगीत तुम्हारा जादू था शेरों ने मस्तक झुका लिया
सारा आलम सुध बुध भूला सारी दुनिया भरमाई थी।

कहते हैं जब तुम गाते थे बुझते दीपक जल जाते थे
बेमौसम मेघ बरसते थे पानी की झड़ी लगाते थे।
फूलों पर खून झलक आता कलियाँ जवान हो जाती थीं
पत्थर पानी हो जाते थे कहते हैं जब तुम गाते थे।

है कला अजब सागर इसमें जो डूब गया वह पार गया
जो जितनी पीर सहेज सका वह उतना कर्ज उतार गया।
तुमने यह पीर सहेजी थी तुमने यह पावक पाया था
जिसका उभार इस दुनिया को बरसों के लिए सँवार गया।

संगीत तुम्हारा दुनिया के बहते घावों को मरहम था
जिसको स्वर का वरदान मिला बाकी न रहा कोई गम था।
रोनेवाले मुसकाते थे खोनेवाले पा जाते थे
संगीत तुम्हारा मुर्दों को जीवन दे ऐसी सरगम था।

साधना तुम्हारी सम्राटों का मान झुका जिसके भ्रागे
सम्मान झुके जिसके भ्रागे व्यवधान झुका जिसके भ्रागे
साधना तुम्हारी जीवन का कुछ ऐसा दर्द लिए जागी
क्या बात भ्रादमी की शायद भगवान झुका जिसके भ्रागे।

भ्रब तक हैं बसे तराने वे इन बहती हुई हवाम्रों मे
भ्रब तक रागिनियाँ घुली हुइ बसे इन श्याम घटाम्रों मे।
भ्रब तक तेरा सगीत गुँजाती है भारत की गली-गली
भ्रब तक वह जादू जीवित है रागी ! इन दसो दिशाम्रों में।

लग रही धरा की गली-गली है वृन्दावन
हर युवक कन्हैया हर युवती राधारानी।
परिचय परिणय रूठने मनाने की वेला
पी रहे नयन प्यासे दे रहे नयन पानी।

बरसी है अजब खुमारी नीरव प्राणों पर,
सबके संग नाच उठा है मेरा पीड़ित मन।
आँखें टकटकी लगाए, सिंदूरी संध्या
अँधियारे की बाँहों में ढील रही है तन।

मैं सोच रहा हूँ कल धरती वीरानी थी
पतझर था सूखी सूखी यह फुलवारी थी।
कोयल उदास बेचैन बुलबुला के दिल थे
खामोश पपीहे मौन मधुर किलकारी थी।

सहमी दुनिया को आज नया शृंगार मिला
कलियाँ चटकीं मदहोश चमन सरसाए हैं।
फूलों के मंजुल प्यालों में भर भर पराग
दानी बसंत ने मधु के घूँट पिलाए हैं।

मैं सोच रहा हूँ बस फिर उजड़ेगी बहार,
रेगिस्तानी आँधियाँ जगत् झुलसाएँगी।
धू धू जलने लग जाएगा यह आसमान
नववधू धरा कल फिर उदास हो जाएगी।

मैं सोच रहा हूँ रे! ऐसा क्यों होता है
क्यों झर जाने हर कली खिलाई जाती है?
क्यों सावन के घन मचल-मचल घिर आते हैं
अंगारा की बरखा बरसाई जाती है?

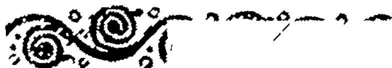
डूब रहा सूर्य है उग भी रहा नया चाँद
दोनों तेजस्वी साथ साथ हैं जन्म मरण।
अवसान-उदय दोनों निश्चित गति से क्रम से
करते हैं संग सदा से संसृति का नियमन।

परिवर्तन प्रकृति सृष्टि का है अविचल विधान
सुख-दुख यश अपयश हानि-लाभ रुदन-गायन।
कितनी छोटी-सी बात कहानी दुनिया की
परिवर्तन सरिता दुख-सुख कूल तरी जीवन।

ठूँठ और वृक्ष

हरे हरे कोमल पातों के पहने वसन निराले
झूल रहे झूला समीर का कुछ तरुवर मतवाले।
नया नया सावन पाया है नई नई तरुणाई,
तना गर्व से दीप पास बिजली जो अभी न आई।
लिपटी तन से युवती वल्लरियों की कोमल बाहें
नया नया अनुभव है अब सब पास न आईं आहें।
पास वहीं पर एक ठूँठ है पल्लवहीन दिगंबर,
उजड़ा उजड़ा तन है लेकिन निस्पृह मन है उर्वर।
निरासक्त निर्बंध प्राण की सद्‌गति का अभिलाषी
दूर विभव की तम छाया से तप पूत अविनाशी।
एक रात बोले सब तरुवर, ऐ कुरूप अपशकुनी
देख देख जलता है हमको भोग रहा निज करनी।
पल्लव छिने छिनी तरुणाई, रूप गया अभिशापी
स्वाभाविक है जलन तुम्हारे अन्तर को जो व्यापी।
ठूँठ हँसा आँखों के आगे नाची जीवन सुधियाँ
(जो अब पाईं इनसे महँगी गईं लुटी जो निधियाँ)
बोला 'मैं भी देख चुका हूँ तुम-से दिन मतवाले
मैंने भी बाले थे मन में दीपक साधोंवाले।
मैंने भी मादक मदिरा के रिक्त किए हैं प्याले
मेरे प्राणों से भी फूट बहे सुधियों के छाले।

सविकाम्रों की मृदु भौंहियाँ भ्रूभंग भ्रमर की हाला
साँसो पर साँसों के उन्मद आतप की मधु ज्वाला।
प्राणा से प्राणों के परिचय की मतवाली घड़ियाँ
जीवन के आँगन में सावन के मेघों की झड़ियाँ।
सोने के चमकीले दिन रूपे की उजली रातें
प्राणों का पाखी करता था आसमान से बातें।
लिप्त किन्तु निर्लिप्त रहा मैं जल में खिले कमल-सा
सब मुझमे मिल गए, शेष मैं निर्मल गंगाजल-सा।
जितना चला चला जीवन का शुभ्र सत्य पहचाना
मिट्टी का तन मिट्टी का मन मिट्टी खाना बाना।
दुनिया का क्रम देखा समझा सदा वसन्त नहीं है
कितने पथिक थके पर मिलता पथ का अन्त नहीं है।
कितने फूल अजान यहाँ पर प्रतिदिन झर जाते हैं
मरघट कितने चमन तप्त-सिकता से भर जाते हैं।
सूरज सा तेजस्वी काल तिमिर से जीत न पाता,
जीवन से विभ्राट मरण का अविनश्वर है नाता।
जरा धूप हो गई तुम्हारे पात झुलस जाते हैं
कड़के बिजली तनिक कि सहमे नयन बरस जाते हैं।
मुझे जला दे किसी धूप में इतनी तपन नहीं है,
झुलसे मेरा गात किसी रवि के खर किरण नहीं है।
मेरी प्रखर साधना साथी! समझो व्यर्थ नहीं है,
भय दे मुझे, कि कोई झंझावात समर्थ नहीं है।
मुझे नहीं कोमल लताओं की चितवन ललचाती
सावन के बादल न बुलाते धूप न लख झुलसाती।
तुम कोलाहल के वासी मैं निर्जन का सन्यासी
दुख सुख में जीवन की सम्यक गति का मैं अभ्यासी।
कालकूट तुम पचा न सकते सदा सुरा पर निर्भर,
मधु सा लगे हलाहल मैं हूँ नीलकंठ प्रलयंकर।

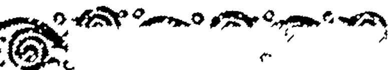


ठूँठ और वृक्ष

हरे हरे कोमल पातों के पहने बसन निराले
झूल रहे झूला समीर का कुछ तरुवर मतवाले।
नया नया सावन पाया है नई नई तरुणाई,
तना गर्व से धीप पास बिजली जो अभी न आई।
लिपटी तन से युवती वल्लरियों की कोमल बाहें,
नया नया अनुभव है अब तक पास न आईं आहें।
पास वहीं पर एक ठूँठ है पल्लवहीन दिगंबर,
उजड़ा उजड़ा तन है लेकिन निस्पृह मन है उर्वर।
निरासक्त निर्बंध प्राण की सद्गति का अभिलाषी
दूर विभव की तम छाया से तप पूत अविनाशी।
एक रात बोले सब तरुवर, 'रे कुरूप अपशकुनी
देख देख जलता है हमको भोग रहा निज करनी।
पल्लव छिने छिनी तरुणाई, रूप गया अभिपापी
स्वाभाविक है जलन तुम्हारे अन्तर को जो व्यापी।'
ठूँठ हँसा आँखों के आगे नाची जीवन सुधियाँ
(जो अब पाईं इनसे महँगी नहीं लुटीं जो निधियाँ)
बोला 'मैं भी देख चुका हूँ तुम-से दिन मतवाले
मैंने भी बाले थे मन में दीपक सार्पोंवाले।
मैंने भी मादक मदिरा के रिक्त किए हैं प्याले
मेरे प्राणों से भी फूट बहे सुधियों के छाले।

लतिकाओं की मृदु बैंहियाँ भ्रूभंग अधर की हासा
साँसों पर साँसों के उन्मद मारुत की मधु ज्वाला।
प्राणों से प्राणों के परिणय की मतवाली घड़ियाँ
जीवन के आँगन में सावन के मेघों की झड़ियाँ।
सोने के चमकीले दिन रूपे की उजली रातें
प्राणों का पाखी करता था आसमान से बातें।
लिप्त किन्तु निर्लिप्त रहा मैं जल में खिले कमल-सा
सब मुझमें मिल गए, शेष मैं निर्मल गंगाजल-सा।
कितना जला जला जीवन का शुभ्र सत्य पहचाना
मिट्टी का तन मिट्टी का मन मिट्टी ताना बाना।
दुनिया का क्रम देखा समझा सदा बसन्त नहीं है
कितने पथिक थके पर मिलता पथ का अन्त नहीं है।
कितने फूल जवान यहाँ पर प्रतिदिन झर जाते हैं
मरघट कितने चमन तप्त-सिकता से भर जाते हैं।
सूरज सा तेजस्वी काल तिमिर से जीत न पाता
जीवन से विभ्राट मरण का अविनश्वर है नाता।
जरा धूप हो गई तुम्हारे गात झुलस जाते हैं
कड़के बिजली तनिक कि सहमे नयन बरस जाते हैं।
मुझे जला दे किसी धूप में इतनी तपन नहीं है
झुलसे मेरा गात किसी रवि के कर किरण नहीं है।
मेरी प्रखर साधना साथी! समझो व्यर्थ नहीं है,
भय दे मुझे, कि कोई झंझावात समर्थ नहीं है।
मुझे नहीं कोमल लताओं की चितवन ललचाती
सावन के बादल न बुलाते धूप न तन झुलसाती।
तुम कोलाहल के वासी मैं निर्जन का संन्यासी
दुख सुख में जीवन की सम्यक् गति का मैं अभ्यासी।
कालकूट तुम पचा न सकते सच सुरा पर निर्भर
मधु सा लगे हलाहल मैं हूँ नीलकंठ प्रलयंकर।

मरकर विजय मृत्यु पर पाऊँ वह चलनेवाला हूँ
मात्र प्रदीप जलाऊँ बुझकर वह जलनेवाला हूँ।
तन की सुन्दरता पर मेरी नहीं आस्था क्षण भर,
मन की सुन्दरता पर मेरी सब श्रद्धा न्योछावर।
मन कुरूप तो व्यर्थ रूप सम्मोहन की यह माया
मन सुन्दर तो क्यों युग-युग का तप सार्थक हो आया।
किस पर अहंकार ? हरियाली ! यह पतझर की दासी
वल्लरियाँ ? इनके यौवन की पीछे यही उदासी।
सावन घन ! ये आतप की भूमिका बने आते हैं,
इनकी बूँद बूँद के पीछे शोले मुसकाते हैं।
तुम्हें प्यार है तन की मंजुल हरी हरी छाया से
मुझे प्यार है प्राणों में पलती प्रमत्त ज्वाला से।
तुमसे जो कुछ मिला सहेजा मैंने सदा लुटाया
पल्लव-पल्लव दिया न लेकिन कभी हृदय अकुलाया।
सुख जितना बाँटो वह निश्चित दुगुना बढ़ जाता है,
दाह समेटो जितना सुख के वह समीप आता है।
अंकुर, तरुवर, द्विपद चतुष्पद सब मिटनेवाले हैं,
हर उपवन की रूप राशि के पतझर रखवाले हैं।
सोचो तो फिर वह क्या है जो बाकी रह जाता है !
क्या है वह जो बार मौत का हँसकर सह जाता है !
जो कुछ दिया लुटाया उतना बाकी रह जाता है
जो संग्रह करते हो काल-सरित् में बह जाता है।
क्यों समेटते हो जितना जो भी है उसे लुटाओ
बाँटो बाँटो इस मिट्टी का पूरा कर्ज चुकाओ।
कैसा मोह ! सभी बन्दी परिवर्तन की कारा में
बहते चलो सभी के बनकर सम्बल भव-धारा में।



हारे हुए राही से

'कौन हो तुम ? क्यों झुकाए शीश बैठे हो ?
कौन बिजली है कि जो मन को जलाती है ?
कौन पीड़ा है नयन जो कर गई गीले ?
क्या हुआ मुसकान अधरों तक न आती है ?
कौन अंगारे हृदय में जल रहे ऐसे ?
कौन-सी उलझन कि आगे चल नहीं सकते ?
यह नहीं पहला अँधेरा है कि जिसके पास—
थरथराते हो धधककर जल नहीं सकते।
और भी कैसी भयानक आँधियाँ आईं,
नाव ऐसी तो न लेकिन डगमगाई थी।
हाथ से चप्पू नहीं छोड़े कभी तुमने
मिट गए, पर मौत से मुँह की न खाई थी।
सिंधु ने टोका पहाड़ों ने तुम्हें रोका
तुम सदा संग्राम की जय बोलते आए।
रात ने कितना तुम्हें बाँधा हजारों बार,
रोशनी के द्वार पर तुम खोलते आए।
आज ही ऐसा हुआ क्या है, कि तुम बेमन
पंथ से हारे हुए भयभीत रोते हो ?
कुछ कहो मैं हर सकूँ शायद तुम्हारी पीर !
कुछ हँसो क्यों आँसुओं से मन भिगोते हो ?'

आदमी हूँ युद्ध से हारा हुआ हूँ मैं
हौसला टूटा हृदय टूटा हुआ मेरा।
जिंदगी भर एक आँधी ने मुझे घेरा
क्या कहूँ बस भाग्य ही फूटा हुआ मेरा।

धूप जलती धूप ही मेरी सहेली है
एक पल भी प्राण तक छाया नहीं आई।
जिंदगी मेरी मरुस्थल की कहानी है,
एक नन्ही बूँद सांसों को न मिल पाई।

तुम हँसोगे सोचता हूँ दो बची साँसें
इन बहारों मे बसूँ विश्राम ही कर लूँ।
दो घड़ी इन फूल कलियों का सहारा लूँ
गंध से मकरंद से मन की गमी भर लूँ।

और सोचो भी रहूँ कब तक व्यथा सहता
कर्म के तूफान में बहता चला जाऊँ?
दो घूँटा के घूँट मादक मिल नही पाएँ,
क्यों जहर की आग में दहता चला जाऊँ?

सच कहूँ इन आँधियों से मैं नहीं हारा
आज अपनी प्यास से हारा हुआ हूँ मैं।
लालसाएँ खींच लाई हैं मुझे पीछे
भोग की तलवार का मारा हुआ हूँ म।'

'आदमी हो अब किनारा चाहते हो तुम!
सच कहो क्यों जिंदगी भर पीर झेलोगे?
धूल पर आकर भले डूबो तुम्हें क्या है!
आज तो तुम तृप्ति से भी खेल खेलोगे!

हाय इतना तुम न लेकिन जान पाए हो,
तृप्त होना है पिपासा को बढ़ा लेना।

साथ मरकर भी न छोड़ेगा तुम्हारा जो
एक ऐसा बोझ ही सिर पर उठा लेना।
तृप्त होना है अगर तो प्यास को पी लो
दर्द बढ़ने दो यही मुसकान बनता है।
हर मुसीबत एक दिन सम्मान बनती है
हर थपेड़ा एक दिन वरदान बनता है।
एक छोटी बात कहना चाहता हूँ मैं
हार के आगे अगर माथा झुकाओगे।
एक सपना भी न पूरा कर सकोगे तुम
और क्या आदर्श जग में छोड़ जाओगे?
ज़िंदगी भर बिजलियों से जो नहीं खेला
मौत के जिसने नहीं गलबाँह डाली है।
वह जिया बेकार जिसने मुक्त लहराती
आदमीयत की ध्वजा नीचे झुका ली है।

आदमी हूँ युद्ध से हारा हुआ हूँ मैं
हौसला टूटा हृदय टूटा हुआ मेरा।
जिंदगी भर एक आँधी ने मुझे घेरा
क्या कहूँ बस भाग्य ही फूटा हुआ मेरा।

धूप जलती धूप ही मेरी सहेली है
एक पल भी प्राण तक छाया नहीं आई।
जिंदगी मेरी मरुस्थल की कहानी है
एक नन्ही बूँद साधों को न मिल पाई।

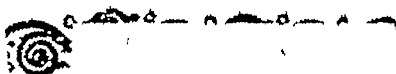
तुम हँसोगे सोचता हूँ दो बची साँसें
इन बहारों में बसूँ विश्राम ही कर लूँ।
दो घड़ी इन फूल कलियों का सहारा लूँ
गंध से मकरंद से मन की गली भर लूँ।

और सोचो भी रहूँ कब तक व्यथा सहता
कर्म के तूफान में बहता चला जाऊँ?
दो सुधा के घूँट मादक मिल नहीं पाएँ,
क्यों जहर की आग में दहता चला जाऊँ?

सच कहूँ इन आँधियों से म नहीं हारा
आज अपनी प्यास से हारा हुआ हूँ म।
लालसाएँ खींच लाई हैं मुझे पीछे
भोग की तलवार का मारा हुआ हूँ मैं।

'आदमी हो अब किनारा चाहते हो तुम!
सच कहा क्यों जिंदगी भर पीर झेलोगे?
कूल पर आकर भले डूबो तुम्हें क्या है!
आज तो तुम तृप्ति से भी खोल खेलोगे।
हाय इतना सुन न लेकिन जान पाए हो
तृप्त होना है पिपासा को बड़ा लेना।

दाह कितना हो बिलखना मैं न लेकिन सीख पाया
पी गया जितना मिला विष और पीकर मुस्कराया।
मैं समझता हूँ तुम्हारी पीर, प्राणों की विकलता
घुल रहे तुम पर हमारा दाह बहता है पिघलता।
आँख तेरी है मगर रोता दुखी संसार इसमें
रो रहा है धर्म इसमें रो रहा है प्यार इसमें।
तुम कि जो इस सृष्टि के सारे बसन देखे हुए हो
मास-वर्षों का युगों का सफरन देखे हुए हो।
वह प्रथम मानव कि जिसने इस धरा पर आँख खोली
भर गया कितनी उमंगों से हृदय की रिक्त झोली।
तुम हँसे इतना कि तुमने यह धरित्री सींच डाली
और पतझर ने तुम्हारे सामने ग्रीवा झुका ली।
पट गया हरियालियों से शुष्क रेगिस्तान सारा
बन गए थे तुम नियति के दूत ! जीवन को सहारा।
चर्म के तन पर बसन नख-दंत अस्त्रों का अहेरी
डोलता फिरता गुँजाता नर विजय की दिव्य भेरी।
एक दो दस बीस क्रमशः एक मेला जुड़ गया था
आदमी का हाथ रचना की डगर पर मुड़ गया था।
साधना ऊपर उठी नक्षत्र नभ के तोड़ लाई
कर्म ने विभवा दिशा के भाल पर रोली रचाई।
भावनाओं ने पवन की डाल पर झूला झुलाया
आदमी आगे बढ़ा तो सिंधु सातों छान आया।
भूख जीवन की रहस्यों के किवारे खोलती थी
सभ्यता अपनी धरा पर मुक्त होकर डोलती थी।
और तब से रात दिन ढलते रहे युग कल्प बीते
खोजता आया चला इंसान जीने के सुभीते।
एक अंकुर था वहाँ झुरमुट गुलाबों के खड़े हैं
सिर झुकाए धूल में रौंदे हुए काँटे पड़े हैं।



हिमालय के आँसू

दर्द यह कैसा हिमालय ! आज यह कैसा रुदन है ?
क्या हुआ जो सिसकियों के भार से बोझिल पवन है ?
गल रहा चट्टान का तन आज क्यों बनकर हिमानी ?
बज्र से मन में जगी कोई दबी पीड़ा पुरानी ?
चोट गहरी है, इसे मेरा हृदय पहचानता है,
क्योंकि दुनिया की व्यथा में मुक्ति अपनी मानता है।
आँख से छलका हिमालय ! अश्रु जो पहला तुम्हारा
दे गया सहसा किसी भूचाल का मुझको इशारा।
बह चली नदियाँ उछल छल-छल विकल निर्झर चले हैं
अश्रु जल है, पर, मुझे हर बूँद में शोले मिले हैं।
प्राण की ज्वाला पिघलकर आँसुओं में ढल रही है,
आदमी के दर्द की कोई कहानी चल रही है।
मैं न सुन पाता मगर संवेदना सब सुन रही है
अश्रु कितने गिन रही है, दाह कितना गुन रही है।
पढ़ रहा हूँ मैं तुम्हारी वेदना की मूक भाषा
दे गई है आग मेरे प्राण को तेरी पिपासा।
और तेरे साथ मेरे मान गीले हो गए हैं,
राग भारी हो गए, अरमान गीले हो गए हैं।
हाँ मगर मैं स्वाभिमानी भूम बहा पाता नहीं हूँ
मर्त्य हूँ रोकर हृदय का दर्द गा पाता नहीं हूँ।

दाह कितना हो बिलखना मैं न लेकिन सीख पाया
पी गया जितना मिला विष और पीकर मुस्कराया।
मैं समझता हूँ तुम्हारी पीर, प्राणों की विकलता
घुल रहे तुम पर हमारा दाह बहता है पिघलता।
आँख तेरी है मगर रोता दुखी संसार इसमें
रो रहा है धर्म इसमें रो रहा है प्यार इसमें।
तुम कि जो इस सृष्टि के सारे बसन देखे हुए हो
मास-वर्षों का युगों का संचरण देखे हुए हो।
वह प्रथम मानव कि जिसने इस धरा पर आँख खोली
भर गया कितनी उमंगों से हृदय की रिक्त झोली।
तुम हँसे इतना कि तुमने यह धरित्री सींच डाली
और पतझर ने तुम्हारे सामने ग्रीवा झुका ली।
पट गया हरियालियों से शुष्क रेगिस्तान सारा
बन गए थे तुम नियति के दूत! जीवन को सहारा।
धर्म के रथ पर वसन नख-दंत अस्त्रों का अहेरी
डोलता फिरता गुँजाता नर-विजय की दिव्य भेरी।
एक-दो दस-बीस क्रमशः एक मेला जुड़ गया था
आदमी का हाथ रचना की डगर पर मुड़ गया था।
साधना ऊपर उठी नक्षत्र नभ के तोड़ लाई
कर्म ने विधवा दिशा के भाल पर रोली रचाई।
लालसाओं ने पवन की डाल पर झूला झुलाया
आदमी आगे बढ़ा तो सिंधु सातों छान आया।
भूत जीवन की रहस्यों के किवारे खोलती थी
सभ्यता अपनी धरा पर मुक्त होकर डोलती थी।
और तब से रात दिन ढलते रहे युग कल्प बीते
खोजता आया चला इंसान जीने के सुभीते।
एक अंकुर था जहाँ झुरमुट गुलाबों के खड़े हैं
सिर झुकाए धूल में रौंदे हुए काँटे पड़े हैं।

आँधियों में दीप जीवन का कसमस-सा खिल रहा है,
स्वर्ग का आसन धरा की गर्जना से हिल रहा है।
किन्तु तब में आज में कितना बड़ा अन्तर हुआ है
आदमी भीतर घुना बाहर भले उर्वर हुआ है।
भू-गगन नापे उदधि बाँधा दिशाएँ बाँध लाया
एक अपनी ही पिपासा नर न अब तक बाँध पाया।
दो हृदय के बीच कितना भेद की दीवार आई,
शक्ति ने अपने लहू को रौंदने भेरी बजाई।
धर्म ने चाहा भ्रमित नर का अँधेरा पथ बदल दे,
कर्म ने चाहा हृदय की राह के काँटे कुचल दे।
ज्ञान की गंगा बही इसके कलुष पर धुल न पाए,
अनसुनी कर बढ़ गया यह दम्भ की ग्रीवा उठाए।
राम का पौरुष जगा घनश्याम की गीता जगी थी
स्नेह का वरदान ले राधा जगी सीता जगी थी।
बुद्ध-गांधी की तपस्या सूर-तुलसी का तराना,
नाम लिखवा दी इसे 'तकदीर' ने चाहा जगाना।
युद्ध हिंसा पाशविकता का घृणा का क्रम न बदला
चढ़ गए सूली सहज ईसा मगर आदम न बदला।
निर्वसन तन पर वसन पर मन अभी तक निर्वसन है
नग्न प्राणों पर न कोई सभ्यता का आवरण है।
तर्क है श्रद्धा नहीं विश्वास का संबल नहीं है
आदमी के पास पावन प्यार का आँचल नहीं है।
रो रहे हो तुम हिमालय! आज कुछ ज्यादा ढरे हैं,
सृष्टि के शव पर तुम्हारे अश्रु अक्षत-से झरे हैं।
बिजलियों की यह कड़क काली घटाएँ आ गई हैं,
चाँद-तारों पर निराशा की परत-सी छा गई है।
कुण्डली मारे तिमिर की सर्पिणी फुफकारती है,
क्रुद्ध झंझावात प्राणों की बुझी सी आरती है।

पर हिमालय ! ओ पुरातन विश्व मानव के पुजारी !
व्यर्थ जाएगी नहीं संवेदना निश्छल हमारी ।
आज भी मेरा अटल विश्वास आएगा सवेरा
जगमगाएगा नव आलोक से आकाश तेरा ।



पर हिमालय ! भ्रा पुरातन विश्व मानव के पुजारी !
व्यथ जाएगी नही सवेदना निश्छल हमारी ।
भ्राज भी मेरा भ्रटल विश्वास भ्राएगा सवेरा
जगमगाएगा नय भ्रालोक से भ्राकाश तेरा ।

